॥ जय सीयाराम ॥

॥ रामकथा ॥

मोरारिबापू

मानस-अंबिका

अंबाजी (गुजरात)

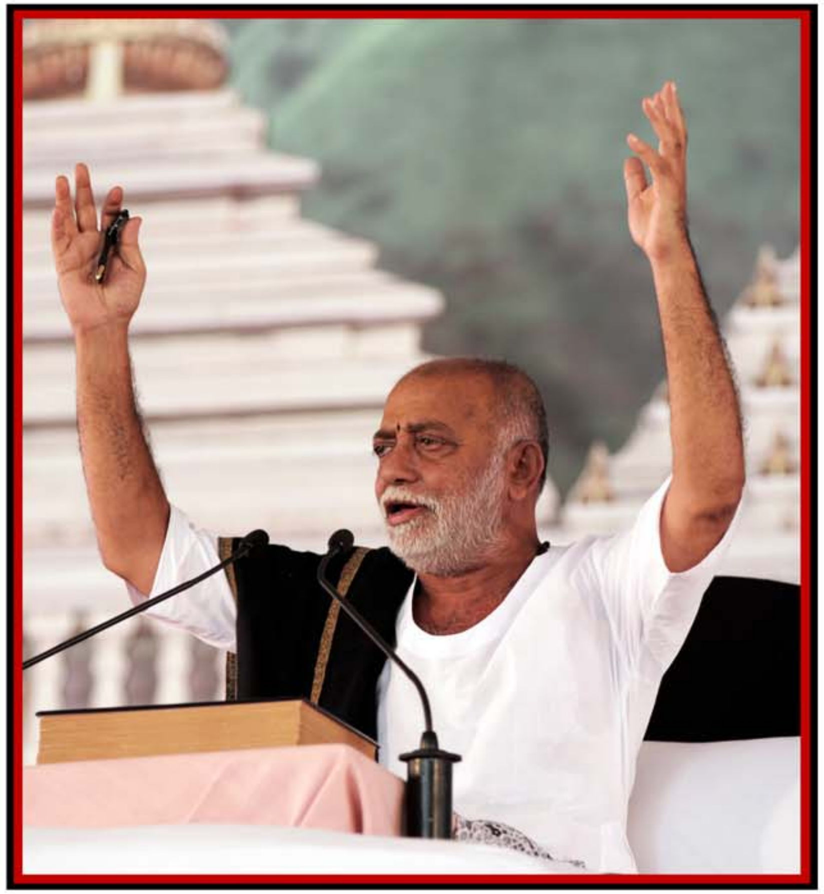

सुंदर सहज सुसील सयानी। नाम उमा अंबिका भवानी।
जगदंबिका जानि भव भामा। सुरन्ह मनहि मन कीन्ह प्रनामा॥

।। रामकथा ।।
मानस-अंबिका

मोरारिबापू
अंबाजी – गुजरात
दिनांक : ०५-१०-२०१३ से १३-१०-२०१३
कथा-क्रमांक : ७५०

प्रकाशन :
मार्च, २०१४

प्रकाशक
श्री चित्रकूट धाम ट्रस्ट,
तलगाजरडा (गुजरात)
www.chitrakutdhamtalgajarda.org

कोपीराईट
© श्री चित्रकूटधाम ट्रस्ट

संपादक
नीतिन वडगामा
nitin.vadgama@yahoo.com

राम-कथा पुस्तक प्राप्ति
सम्पर्क-सूत्र :
ramkatha9@yahoo.com

ग्राफिक्स
स्वर ॲनिम्स

प्रेम–पियाला

अश्विन की नौरात्रि के दिनों में दिनांक ५–१०–२०१३ से १३–१०–२०१३ दरम्यान शक्तिपीठ अंबाजी की पावनभूमि में मोरारिबापू की कथा सम्पन्न हुई। अंबाजी के धाम में आयोजित इस रामकथा को बापू ने 'मानस–अंबिका' पर केन्द्रित की थी तथा 'रामचरित मानस' अंतर्गत तुलसीदासजी के माँ भवानी विषयक दर्शन के परिप्रेक्ष्य में बापू ने अपने तात्त्विक विचार व्यक्त किए।

'रामचरित मानस' के 'बालकांड' में जानकीजी ने की गौरीस्तुति को ध्यान में लेते हुए कही गई इस कथा में सहज सुंदर, सुशील, सयानी ऐसी माँ भवानी के तीन स्तर को फस्साते हुए बापू ने कहा कि, ''पराम्बा माँ तीन स्तर पर काम करती है। वह त्रिस्तरीय है। इसीलिए उसे 'स्त्री' कहते हैं। हमारे यहां कहा गया है स्त्री के तीन स्तर है। एक, वह किसी की कन्या है। दूसरा, वह किसी की धर्मपत्नी है। तीसरा, वह किसी की माँ है। कोई भी स्त्रीशरीर अंश का ही अंश है। इन तीन स्तर पर महाशक्ति काम करती है। इन तीन स्तर का परिचय 'रामचरित मानस' है।''

दुर्गा के चरणकमल की पूजा का महिमागान करने के साथ, मोरारिबापू ने इस तरह से इसका विशिष्ट अर्थघटन भी किया था कि, ''नौरात्रि में देवी के चरणकमल की पूजा तो कीजिए ही, पर आज के संदर्भ में मुझे कहना हो तो यों कहूं कि भारत देश की बहन–बेटियों के अपने गर्भ में बेटी हो तो उसका गर्भपात न कराये, तो वह भी पूजा मानी जायगी। देवी के चरणकमल की पूजा करसुखी होना हो तो दहेज की प्रथा में नहीं पड़ना है। हम सबको समाज में नारी का सम्मान करना पड़ेगा। उसका अपमान न हो इसका ध्यान रखना पड़ेगा।'

सुविदित है कि मोरारिबापू रामकथा के माध्यम से समाज के वहम और गलत मान्यताओं को दूर कर सामाजिक जागृति भी लाते हैं। प्रस्तुत रामकथा में भी बापू ने व्यासपीठ पर से ऐसी बात कही थी, ''अभी भी अपने समाज में जो बलिप्रथा है, वह भगवान की कथा श्रवण के बाद खत्म हो जानी चाहिए। अपनी ममता और अहंता का बलिदान देना है। आप बलिप्रथा बंद कीजिए। माँ को बलि की जरूरत नहीं है। फिर भी आपको तकलीफ पड़े तो उसका सारा जिम्मा मैं लेने को तैयार हूं। इन दिनों तंत्रपूजा काफी होती है। एक बिनती, हम जैसे सीधे–सादे आदमियों को शक्ति की तंत्रपूजा में नहीं पड़ना चाहिए। माँ को सात्त्विक भाव से भजिए।''

शक्ति-आराधना के पुनित-पावन दिनों में अंबाजी के धाम में कथागान निमित्त रूप मोरारिबापू ने यों मातृशक्ति की खूब महिमा की तो साथ ही साथ अंधश्रद्धा में डूबे हुए लोगों को जगाने का पुण्यकार्य भी किया।

– नीतिन वडगामा

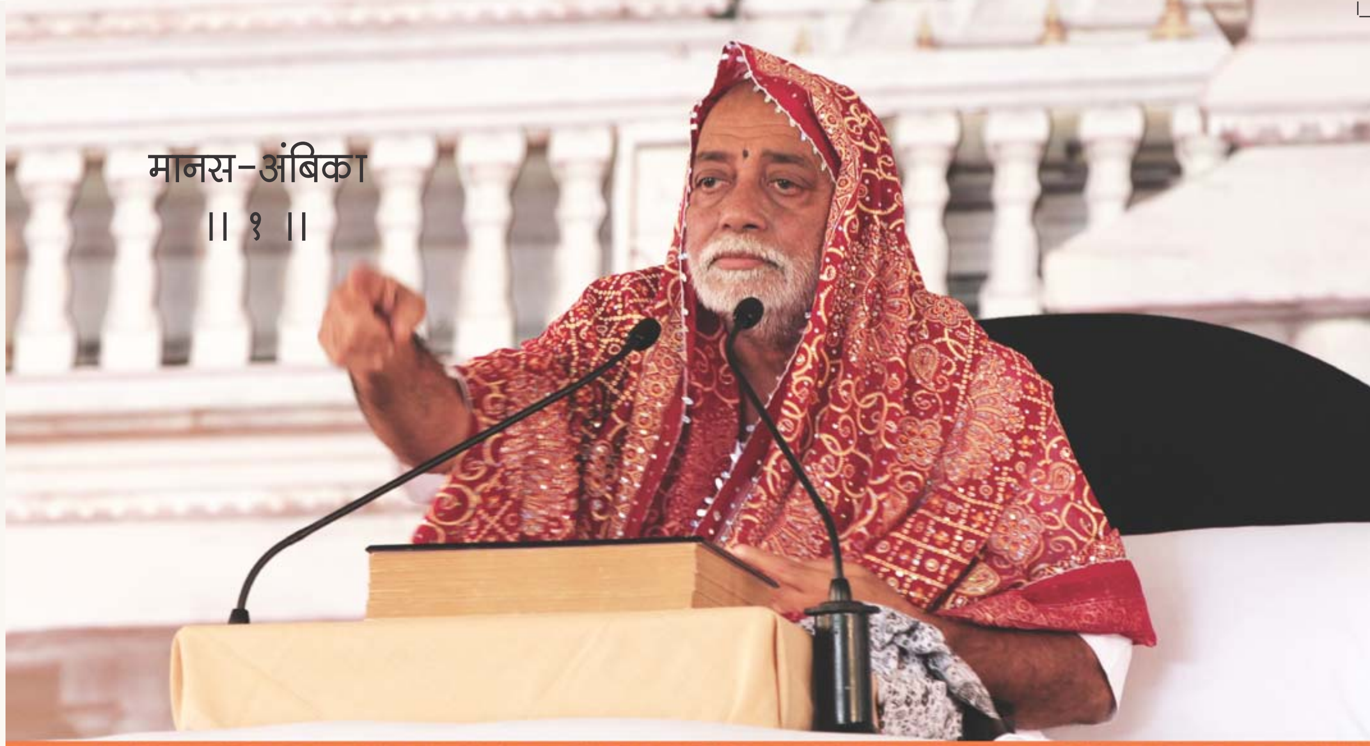

मानस-अंबिका
।। १ ।।

मेरा 'मानस' वह मेरा झिंझिया है

सुंदर सहज सुसील सयानी। नाम उमा अंबिका भवानी।
जगदंबिका जानि भव भामा। सुरन्ह मनहि मन कीन्ह प्रनामा।।

बाप, पृथ्वी के गोले पर जो शक्तिपीठ हैं उनमें से एक शक्तिपीठ है, अंबाजीधाम। उस शक्तिपीठ में बिराजमान पराम्बा, जगदम्बा, भवानी के चरणों में रामकथा गाने का भगवती पराम्बा माँ अंबाजी की कृपा से अवसर मिला उसकी एक विशेष प्रसन्नता व्यक्त कर, कथा के आरंभ में जिनके हमें आशीर्वाद मिले, प्रसन्नता प्राप्त हुई ऐसे हम सबके पूज्यचरण संतगण यहां विविध शक्ति से दीप प्रज्वलित हुआ। उस समाज में से आते हुए सब, विधविध क्षेत्र में से आते हम सबके ज्येष्ठ जन, आप सब मेरे श्रावक भाई-बहन और पूरी दुनिया विज्ञान के सदुपयोग से इस कथा का दर्शन-श्रवण कर रही है, ऐसे सब श्रोताओं को और अन्य सबको व्यासपीठ पर से मेरे प्रणाम, जय अम्बे।

बाप, रामानंदीय परंपरा से दीक्षित एक परिवार, कोटक परिवार उनके माता-पिता की आशीर्वाद छाया प्राप्त करके कोटक परिवार के प्रवीणभाई और उनका समस्त परिवार बरसों से रामप्रेमी रहा है। जिस बापजी और माई का बारबार यहां स्मरण हुआ। तलगाजरडा की यात्रा यह परिवार वर्षों तक करता रहा ऐसा परिवार इस कथा में निमित्त बनता है इसका भी एक विशेष आनंद है।

बाप, मेरे मन में ऐसा था कि भारत के सभी तीर्थों में मुझे एक-एक अनुष्ठ ान क रना है। और मैं क र रहा हूं। सुयोग से यह हो रहा है। गुजरात के क रीब-क रीब सभी महत्त्वपूर्ण तीर्थस्थानों में रामक था का अनुष्ठ ान क रने का मुझे पुण्यलाभ मिला है। माँ अम्बा की यह भूमि इसमें एक बार रामक था गाने का मेरा भी आंतरिक मनोरथ रहा। हनुमानजी की कृ पा से यजमान तो मेरे कु र्ते की जेब में होते हैं। मैं क हूं और वे निमित्त होते हैं। पर बीड ा उठ ाया प्रवीणभाई ने और उनके परिवार ने। जब क भी जोग-लगन-ग्रह-बार-तिथि होते हैं तभी क था का आयोजन हो सक ता है। एक अर्थ में उनके परिवार का पावन मनोरथ और दूसरे अर्थ में तलगाजरड ी मनोरथ भी था कि एक बार मुझे इस शक्ति पीठ में क था का गायन क रना है। आज आश्विन माह की यह नौरात्रि, इसक ा पहला दिन जिसमें माँ दुर्गा के अनेक रीति से अनेक अनुष्ठ ान साधक क रते हैं। आप सभी जानते हैं कि इन दिनों देश में और विश्व में, अब 'रामचरित मानस' का भी बहुत ही अनुष्ठ ान होता है। ऐसे इन दुर्गापूजा के दिनों में, माँ के धाम में भगवद्क था क हने का अवसर मिला है इसक ा मैं विशेष आनंद व्यक्त क रता हूं और समस्त विश्व को दुर्गापूजा के अवसर पर बधाई देता हूं। बधाई हो!

कौन-सा प्रसंग लूं? इसके बारे में सोच रहा था। इस क था की पीठि क में कौन-सी चौपाईयां लूं? यूं तो रामक था का आश्रय लेक र उसके माध्यम से मातृशक्ति को लेक र मैंने क ई क थाएं क ही है। लगा कि माँ अम्बा के धाम में 'मानस-अंबिका' क रूं और उसके लिए 'बालक ांड' के अलग-अलग संदर्भ की दो पंक्ति यों से मेरी व्यासपीठ ने मुझे प्रेरित कि या और मैंने वही पसंद की। इसी के आधार पर हम 'रामचरित मानस' के अंतर्गत, माँ भवानी के कै से कै से दर्शन हुए मुझे, आप सबको और तुलसी को, ये चौपाईयां ने क रवाए। यह क था रामक था ही है, परंतु उसके अंदर से क था का एक विषय मेरी व्यासपीठ पसंद क र रही है, 'मानस-अंबिका'। साहब, मेरे लिए तो हररोज नौरात्रि है। मेरा 'मानस' यह मेरा झिंझिया है। उसमें एक सौ आठ छि द्र नहीं है। बारिक एक सौ आठ द्वार है। झिंझिया में जो छि द्र होते हैं वो छि द्र नहीं है। घड े में रहे छि द्र क लंक है, झिंझिया में रहे छि द्र शोभा है। कि रणों का प्रसव द्वार है। इस 'मानस' रूपी झिंझिया में एक सौ आठ द्वार है।

साहब, हम झिंझिया में दिए को उजागर क रते हैं। इस झिंझिया में इसके तल में 'ज्ञानदीपक' रखा है। पूरा प्रसंग 'उत्तरक ांड' का है। ज्ञानदीपक का है। उस दीपक तक न पहुंचे तो उसके ऊ पर जो ढ क्क न है उस पर दूसरा दीया रखा है उस पर हम मीठ ाई रखते हैं। यह दीया

भक्ति का है। माधुर्य से भरपूर इसमें भक्ति तत्त्व है। मैं अंबाजी माँ की कथायात्रा पर आया तब मेरे सहयात्री ने मुझसे पूछा कि, 'बापू, माँ के नौ दिन ही क्यों?' इसके कई कारण हो सकते हैं। बाप, पूरे विश्व को, आस्तिक हो या नास्तिक, सबको शक्ति की जरूरत होती है। उसके रूप अलग-अलग होते हैं। बाप, प्रत्येक जीव की कुछ शक्ति की मौलिक मांग है। यह जीव मात्र की कुछ जरूरियात है। हर एक को ज्ञान चाहिए। ज्ञान किसे न चाहिए? न मिले, समझ में न आए। ज्ञान भी शक्ति ही है। 'ज्ञानशक्ति' यह शंकराचार्य का शब्द है।

हम सबको ज्ञानशक्ति चाहिए। आनंदशक्ति चाहिए। किसे आनंद न चाहिए? साहब, कई आदमी मुझे कहते हैं कि, 'कई लोग जरा भी हंसते क्यों नहीं है?' मैंने कहा, मेरा राम जाने! जिसके पास पैसे नहीं है उसे, जिनके पास अधिक पैसे होते हैं उससे जलन होती है। यह सहज मानव स्वभाव है। नहीं होनी चाहिए। पर होती ही है। हम जब ज्यादा आनंद करने बैठें तब जिसे आनंद का अभाव है उसे हम खटकते हैं। अब इसका क्या किया जाए? हम क्यों खटकते हैं? पर आनंद यह मेरी और आपकी मौलिक मांग है। 'आनंदं ब्रह्मेति व्यजानात्।' यह औपनिषदीय सूत्र है। राम तो ब्रह्म ही है। कृष्ण तो ब्रह्म ही है। एक लीला पुरुष है। पर भारत का एक ऋषियों कहता है, 'आनंद ब्रह्म है।' मेरी और आपकी यह आनंद की मौलिक मांग है। जीव मात्र को प्रेमशक्ति, भक्ति शक्ति की मांग है। उसे प्रेम चाहिए। इसके लिए वह मिथ्या प्रयत्न करता है। वह भाव चाहता है। हमारी मौलिक मांग सुख है। उसके कई भेद हो सकते हैं। मेरी और आपकी रुचि और समझ के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को सत्य की भूख होती है। यह हम सबकी भूख है। हम बोल नहीं सकते, आचरण नहीं कर सकते। यह हमें पता होता है। हमारी अनेक शक्यों की मांग होती है। साहब, मैं शक्ति के बारे में बोलूं इसका ज्यादा महत्त्व नहीं होता पर गोस्वामीजी कहते हैं, राम स्वयं दुर्गा है। राम अम्बा है। राम अम्बाजी है। राम अम्बिका है। यह मैं नहीं कहता। मेरे गोस्वामीजी कहते हैं। 'दुर्गा कोटि अमित अरिमर्दन।' कौन है राम? अमित दूषणों को नष्ट करनेवाली, अमित दुर्गारूप, अनेक हाथोंवाली दुर्गा यह राम है।

तो, राम भवानी है, अम्बिका है। यह शास्त्र आधार है। हमने राम नहीं देखे और देखने भी नहीं है। नाम लीजिए। वह रामतत्त्व दुर्गा है। साहब, राम की कृपा अम्बा है। 'तुलसीदास प्रभु कृपा कालिका।' 'हे राम, तेरी कृपा साक्षात् कालिका है।' अरे साहब, तुलसी कहे, रामकथा स्वयं अंबाजी है -

रामकथा कालिका कराला।

महर्षि परमविवेकी याज्ञवल्क्य महाराज के ये शब्द हैं, हे भरद्वाज, रामकथा दुर्गा है, अंबिका है। राम का नाम भगवती अंबा है। राम स्वयं भगवती अंबा है। अरे, यह आदमी, यह हनुमोजति अंबा है। जिसे हम ब्रह्मचारी कहते हैं, अखंड ब्रह्मचर्य की मूर्ति है। पर यह दुर्गा है, साहब। अहिरावण, राम-लक्ष्मण का अपहरण करयुद्धमैदान से पाताल में चला गया तब अपने मालिक को छुड़ाने के लिए इन्होंने साडी-नथली पहनी थी! बालियां पहनी थी! पैरों में घूंघरूं बांधे! अहिरावण देवी का यज्ञ करता था। राम-लक्ष्मण की बलि देनी थी जिससे लंका में रावण को तकलीफ न हो, रावण को तकलीफ न हो, अत: कितकितने अच्छे आदमियों की बलि चढ़ाने की समाज ने कोशिश की है! मेरी व्यासपीठ तीन रावणों के बारे में सोचती है। एक तो रावण। दूसरा अहिरावण

और एक अपनी खोज है सही रावण की। इनमें से सही कौन है? मूल दशानन की प्रकृति कौन-सी है?

राम और लक्ष्मण को बलि चढ़ाने हेतु ले आए। आखिर में मंत्र बोले और पूछा गया कि अभी आप बलि चढ़ाए जायेंगे। किसी को याद करना हो तो कर लो। परस्पर दोनों एक-दूसरे की ओर देखने लगे। राम ने कहा, 'आज हम हनुमोजति को याद कर लें।'

भीम रूप धरि असुर सँहारे।
रामचंद्र के काज सँवारे।।
लाय सजीवन लखन जियाये।
श्री रघुबीर हरषि उर लाये।।

साहब, हनुमानजी को याद किया कि, 'हे मारुति।' फूल बने हनुमान! जहां देवी को माला चढ़ाई और जिस फूल में हनुमोजति था वह फूल देवी के मस्तक पर गया और फूल में से हनुमानजी ने अंगूठा दबाया तो देवी पाताल से भी नीचे गई और गुजराती साड़ी पहनकर हनुमोजति बैठ गया अंबा बन कर! भगवान राम ने हनुमानजी को याद किया तब लक्ष्मणजी को थोड़ी निराशा हुई कि यहां ऐसे में हनुमानजी कैसे आयेंगे। भगवान का ध्यान जगदंबा पर गया तब हनुमानजी ने देवी की अदा से लज्जा से कहा कि, 'आ गया हूं।' और दुर्गा के रूप में हनुमानजी ने अहिरावण को बुलाया। उसे लगा कि माँ बुला रही है।

साहब, यह तो माँ है। मातृत्व के आरंभ पहले वह रक्त बहाती है। और जब गर्भस्थ होती है तब वह आंख में आंसू धारण करती है, मेरे यहां चेतना जन्म लेनेवाली है। ये प्रेम के रूपांतरित रूप है। एक मातृशक्ति रक्त रूप में और फिर आंसू रूप में आती है। उसका तीसरा स्वरूप, शिशु का प्रसव हो और माँ की गोद में उसे दिया जाय तब कुछ क्षसमय के बाद माँ दूध रूप में बहती है। फिर वह अपने संतान को तुष्ट-पुष्ट करने के लिए पूरी जिन्दगी पसीना बहाती है। चार-चार प्रवाह में से जगदंबा बहती है, ऐसी शक्ति की मांग पूरे बिश्व को है।

हनुमानजी देवी के रूप में प्रकट हुए तब वे हनुमोजति देवी बने थे। महान कवि निराला का महाकाव्य है। लंका की युद्धभूमि में रावण मरता न था। तब राम से दुर्गापूजा का अनुष्ठान करवाते हैं। राम कमल चढ़ाते हैं। फिर एक दिन कमल कम पड़ा तो 'मेरी माँ मुझे राजीव लोचन, कमल लोचन कहती है', राम अपने बाण से कमल जैसे नेत्र निकाल आंख के बदले चढ़ा देते हैं! राम दुर्गापूजा करते हैं।

शक्ति की पूजा, मुझे और आपको शक्ति की जरूरत है। बोलना है तो शक्ति चाहिए। जगत के मूल में आदिशक्ति, आदिअंबा है। अत: -

जय आद्या शक्ति मा जय आद्या शक्ति,
अखंड ब्रह्मांड निपाव्यां पडवे पंडित मा,
जयो जयो मा जगदंबे ...

बाप, यह शक्ति पीठ है, जहां कोई भी शिशुभाव से गोद में किलकारी भर सके। शिशुभाव होना चाहिए। तुलसी लिखते हैं -

बालबिनय सुनि करि कृपा रामचरन रति देहु।

माँ तभी समझ में आती है जब हम उनके बच्चे बन जाय। कवि काग लिखते हैं -

मोढे बोलुं 'मा', साचें य नानप सांभरे;
(तारे) मोट पनीमजा,
मने कडवी लागे कागडा!

यह माँ तत्त्व है। मैं चौपाईयों से उनकी गोद में खेलने आया हूं, अपनी तुतली भाषा में। मैं अपने एक सौ आठ द्वारवाले झिंझिया को समर्पित करने आया हूं।

मा काळीने कल्याणीरे मा,

ज्यां जोउं त्यां जोगमाया ...

आप सब जानते हैं यह गरबी मैं जितनी जानता हूं उतनी कथा में कभी-कभी गाता था, फिर कई वर्षों से बंद कर दिया, क्योंकि लोग इस पर अभुआने लगे! मैं आवेश में लाना नहीं चाहता, मैं आपको स्थिर देखना चाहता हूं। जन्म से अभुआने लगते हैं। कोई रूपये तो कोई प्रतिष्ठा के पीछे। शंकराचार्य कहते हैं, 'एकान्ते सुखमास्यताम्।' तुलसीदासजी सुख का एक रहस्य बताते हैं। 'निज सुख बिनु मन होई कि थीरा।' हमें स्थिर होना है। हां, उत्सव मनाने हैं। परंतु अंधश्रद्धा में अभुआना नहीं है। बाप, जगदंबा, जगदंबा है।

निसिचर हीन करउँ महि भुज उठाइ पन कीन्ह।

सकल मुनिन्ह के आश्रमन्हि जाइ जाइ सुख दीन्ह।।

राम ने 'अरण्यकांड' में जल्दबाजी की। दो हाथ उठाकर राम ने पूछा, 'ऋषिमुनि, ये हड्डियों का ढेर किसका है?' जवाब मिला, 'राक्षसगण कितने ही ऋषिमुनि को खा गए हैं उनके ये अस्थियों के ढेर है।' भगवान ने एकदम हाथ उठाकर कहा, 'यह धरती राक्षसविहीन कर डालूंगा!' इस तरह बोले और माँ जानकी ने कहा कि, 'ठाकुर ! इन सबका हनन करने की आप बात करते हैं? मुझसे पूछिए तो सही। आप पिता है, तो मैं माता हूं। असुर भी मेरे ही हैं। आसुरी तत्त्वों का हनन करना है। उनमें रही हुई बुराईयां निकालनी है।' ऐसा कहनेवाली एक मात्र माँ है। विश्व का एकाक्षरमंत्र 'माँ' है।

हम सब रामकथा निमित्त अंबा माँ की गोद में उत्सव मनाने एकत्र हुए हैं। केन्द्र में रामकथा है। माँ जानकीजीने पुष्पवाटिका में अंबा माँ की जो स्तुति की है उसका हम पाठ करें और गुरुकृपा से नौ दिनों तक विशेष दर्शन करते जायेंगे।

ठाकुर रामकृष्ण को एक व्यक्ति ने पूछा, 'आप इतने अस्तव्यस्त क्यों है?' ठाकुर ने थोड़ी देर की चुपकीदी के बाद कहा, 'देख, वहां गंगा तट पर, वो झोंपड़ी देख, उसकी घासफूस सब अस्तव्यस्त है। क्योंकि उस झोंपड़ी में एक हाथी घुस गया था। इसी तरह मेरे भीतर मेरी माँ आ गई है तो सब अस्तव्यस्त हो गया है!'

जगदंबा माँ की विशिष्ठ नौरात्रि में मैं अपना झिंझिया लेकर आया हूं। राम भी माँ है। आज से रामकथा का आरंभ हो रहा है। 'मानस' के सात सोपानों में कहीं न कहीं शक्ति तत्त्व केन्द्र में है। माँ भगवती की गौरीस्तुति, जानकीजी ने जो स्तुति की है उसे हृदयस्थ करने, अपने भीतर के प्रकाश में वृद्धि हो इसीलिए चर्चा करें। मैं कुछ नया करने नहीं आया हूं। आपके साथ बातें करने आया हूं।

सात सोपान - बाल, अयोध्या, किष्किन्धा, सुन्दर, लंका और उत्तर। इन सात विभागों में 'रामचरित मानस' विभाजित है, जिन्हें सात सोपान कहते हैं। वाल्मीकि जी 'कांड' कहते हैं, तुलसी 'सोपान' कहते हैं। ऊपर चढ़ने की सीढ़ी है। 'बालकांड' का आरंभ करते समय तुलसीदासजी सात मंत्रों में मंगलाचरण करते हैं -

वर्णानामर्थसंघानां रसानां छन्दसामपि।

मङ्गलानां च कर्तारौ वन्दे वाणीविनायकौ।।

सात मंत्र कहे। बिलकुल लोक बोली में। हनुमानजी के संकेत से पूरे शास्त्र को ग्राम्यगिरा में उतारने का संकल्प किया। तुलसीजी ने पांच सोरठे लिखें -

जो सुमिरत सिधि होइ गन नायक करिबर बदन।

करउ अनुग्रह सोइ बुद्धि रासि सुभ गुन सदन।।

फिर प्रथम प्रकरण 'रामचरित मानस' का गुरुवंदना, गुरुमहिमा, जिन्हें मेरी व्यासपीठ 'मानस-गुरुगीता' मानती है। थोड़ी चौपाईयां -

बंदउँ गुरु पद पदुम परागा।

सुरुचि सुबास सरस अनुरागा।।

तुलसी ने गुरुवंदना की। आप सब जानते हैं आवश्यकता न हो तो हम किसी की स्वतंत्रता को नहीं हड़पते। पर जहां तक मैं अपना विचार करता हूं तो मुझ जैसे को तो गुरु की जरूरत पड़ती ही है। गुरु का सबसे बड़ा काम है आश्रित में विशेषता का अहंकार नहीं आने देना। गुरु का यह सब से बड़ा काम है कि अपने आश्रित में विशेषता का घमंड न आ जाय। इसीलिए गुरु माँ है। इसीलिए भारत के उपनिषदों में 'मातृदेवो भव' से अपनी परंपरा शुरू होती है। हम विशेषता के अहंकार में न आ जाए, हमारा गुरु हमें रोकता है। अतः अपना भजन, साहित्य गुरु की महिमा गाता है -

गुरु, तारो पार न पायो, हे, न पायो,

प्रथमीना मालिक, तमे रे तारो तो अमे तरीओ ...

तुलसी ने गुरुवंदना की और हमें प्रेरणा दी कि किसी भी व्यक्ति में गुरुभाव नहीं जगना चाहिए। कोई गुरु न मिले तो हनुमान को गुरु माने -

जय जय जय हनुमान गोसाई।

कृपा करहुँ गुरुदेव की नाई।।

तुलसी वंदना प्रकरण में हमें हनुमान-वंदना तक ले जाते हैं। 'विनयपत्रिका' की दो पंक्तियां -

मंगल-मूरति मारुत-नंदन।

सकल अमंगल मूल-निकंदन।।

पवनतनय संतन-हितकारी।

हृदय बिराजत अवध-बिहारी।।

तुलसीदासजी ने गुरुचरणधूल से नेत्र पावन लिए अतः सभी वंदनीय दिखाई दिए। अतः सभी की वंदना करते-करते उन्होंने हनुमंत वंदना की। कथा के संक्षिप्त क्रम में हनुमंत वंदना तक जाकर आज की कथा को विराम देता हूं।

साहब, मेरी तो रोज नौरात्रि है। मेरा 'मानस' मेरा झिंझिया है। उसमें एक सौ आठ छिद्र नहीं है, बल्कि एक सौ आठ द्वार है। झिंझिया में जो छिद्र होते हैं वो छिद्र नहीं है। घड़े में रहे छिद्र कलंक है, झिंझिया में रहे छिद्र शोभा है, किरणों का प्रसवद्वार है। इस 'मानस' रूपी झिंझिया में एक सौ आठ द्वार है। इस झिंझिया के तल में 'ज्ञानदीपक' रखा है। 'उत्तरकांड' का ज्ञानदीपक। उस दीये तक न पहुंचे तो ऊपर जो ढक्कन है उस पर दूसरा दीया भक्ति है। उसमें भक्ति तत्त्व का माधुर्य है।

मानस-अंबिका
।। २ ।।

सतीचरित्र हमें बौद्धिकता से हार्दिकता में दीक्षित करता है

रामकथा अंतर्गत 'मानस-अंबिका' यानी रामकथा में माँ का जो दर्शन है, इसकी विशेष चर्चा हम संवाद के रूप में कर रहे हैं। दो पंक्तियों के आश्रय से कर रहे हैं उनमें से एक पंक्ति -

सुंदर सहज सुसील सयानी। नाम उमा अंबिका भवानी।

सती दक्षयज्ञ में जल कर भस्म हो गई उस समय अंतिम भावना थी कि मुझे अगला जन्म स्त्री का ही प्राप्त हो और मैं जनम दर जनम शिव को ही प्राप्त करूं। फलत: दक्षकन्या दूसरे जन्म में नगाधिराज हिमालय के यहां हिमाचल पुत्री, शैलपुत्री के रूप में पर्वत की पार्वती स्वरूप प्रकट हुई। उस पंक्ति के आधार पर कथा का थोड़ा संदर्भ कहूं।

यह सती दक्ष की पुत्री थी और वे बुद्धि स्वरूपा थी। बुद्धि के प्राधान्य के कारण उनका नाम सती था। उस वक्त उनके मन में तर्क-प्रश्न स्वाभाविक रूप से होते रहे। बौद्धिक व्यक्ति को जो उहापोह होता रहता है ऐसा ही उनके मन में रहा। हम सब जानते हैं कि हम में जब बुद्धि का प्राधान्य हो तब हम में ऐसे सारे उहापोह रहते हैं। शिव सती को लेकर कुंभजऋषि के आश्रम में कथाश्रवण हेतु जाते हैं। अखिलेश्वर शिव पधारे हैं तो कुंभजऋषि स्वागत करते हैं। सती का भी स्वागत करते हैं। शिव ने स्वागत का सीधा अर्थ निकाला कि ये महात्मा कितने विनम्र है! अच्छा अर्थ निकाला। बात सही है कि श्रोता वक्ता की पूजा करे। यहां उल्टा हुआ कि वक्ता ने श्रोता की वंदना की, पूजा की।

नियम ऐसा है कि वक्ता की पूजा हो, यह जीव परंपरा है। शिव परंपरा क्या है? शिव को वक्ता की पूजा करनी चाहिए। इसके बदले वक्ता ने शंकर की पूजा शुरू की। शिव ने सोचा, ऐसा क्यों? कुंभजऋषि की विनम्रता है कि, गद्दी पर बैठे हुए को श्रोता की पूजा करनी चाहिए। उसे आदर देना चाहिए। कई लोग नापसंद करते हैं तो भी मैं कथा के आरंभ में आप सबको प्रणाम करता हूं। सच्चाई से करता हूं। यह रामायणी परंपरा है। वक्ता को यह करना चाहिए। वक्ता में विनम्रता आनी चाहिए। यह विनम्रता कौन-से वक्ता में होनी चाहिए? जिनके गुरु होते हैं। क्योंकि गुरु विशेषता के अहंकार से मुक्त रखते हैं। वक्ता का हृदय श्रोता के प्रति ढले ऐसा होना चाहिए।

तो, कुंभजऋषि ने शिव की पूजा की। शिवजी समझदार कि उन्हों ने एक दम सरल अर्थ लिया कि वक्ता कितने विनम्र है! पर सती की पूजा की इसीलिए सती के मन में अपनी विशेषता का गर्व आया कि मैं दक्ष की कन्या हूं और इसीसे कुंभज मेरी पूजा करते हैं। इसीसे अहंकार की कोंपल फूटी कि अब इनसे क्या कथा सुने? जो हमारी पूजा करते हैं वो क्या कथा कहेगा? समाज ने विनम्रता का ऐसा ही मूल्यांकन किया है। मुझे वेद की वह ऋचा याद नहीं पर मेरी पास विनोबाजी ने सिलेक्ट किए हुए वेदमंत्रों की एक किताब है। उसमें वेद के मंत्र, ऋचाओं को लेकर अपने ढंग से भाष्य किया है। भाईयों-बहनों को पढ़ने जैसी पुस्तक है। उनमें एक मंत्र है, 'नम्रता यही परमात्मा है।' 'नमो' यह परमात्मा का नाम है। 'नमो नम:' कहते हैं तब किसको नमन है? 'नमो' को। 'नमो' माने परमात्मा। आप सब इतनी शांति से कथा सुनते हैं यह आपकी नम्रता है। यह आपका भगवद्पन है। ऐसा जब तक श्रोता में न आए तब तक उनमें कथा आ नहीं सकती। वक्ता भी नम्र होना चाहिए। विनम्रता परमात्मा है। वक्ता का शील विकलांग नहीं होना चाहिए। शरीर विकलांग भले ही हो। गंगासती कहती है -

शीलवंत साधुने वारेवारे नमीओ पानबाई,

जेनां बदले नहीं व्रतमान रे ...

ऐसे शीलवान को बारबार नमन कीजिए। 'नमो' का अर्थ परमात्मा है। जीवन में नम्र रहिए। शिव हमें यह बताते हैं।

गांधीजी के जीवन का एक प्रसंग है। वे ढाका में थे। उन्हें मिलने के लिए ६० वर्षीय बंगाली बाबू जिद्द करता है। बापू से मिलाप थोड़ा मुश्किल था। पर वह जिद्द पर अड़ा रहा। उसे लगा लोग नहीं मिलने देंगे। पर बापू यहां से निकलें तो मैं दर्शन कर लूंगा। साहब, हुआ ऐसा कि बापू निकले तो उसने कोर्डन तोड़ कर बापू के पांव पकड़ लिए। उसने गांधीजी का हाथ पकड़ कर जबरन अपने सिर पर रख लिया। गांधीजी के लिए यह सब नया था। फिर उसने गांधीजी और कस्तूरबा के फोटो वाले पहने हुए दो लोकेट बताए। और कहा, 'बापू, मुझे लकवा की असर हुई और दिमाग पर असर हुई। डोक्टर्स ने इसे लाइलाज बताया। हमने ऐसी मन्नत मानी कि मैं बापू का फोटो गले में पहनुं और एक बार बापू मिले तो उनका हाथ मस्तक पर रख लूं, पर मैं चंगा हो जाऊं इसके बाद।' वह अच्छा हो गया और कहने लगा, देखिए, मैं ठीक हो गया। गांधीजी काफी दु:खी हुए। यह तो मेरे नाम से अंधश्रद्धा फैलेगी। मैं भी कथा में अपने श्रोताओं से कहता हूं, आप श्रद्धा रखिए पर अंधश्रद्धा नहीं होनी चाहिए। आप आप है। आपका अपना एक वजूद है।

गांधीजी ने कहा, ''सबसे पहले गले में से फोटो निकाल दे। फिर तू मेरे साथ आठ दिन बना रह। तूझे पता चल जायगा कि तू चंगा हो गया वो इस गांधी का प्रताप

नहीं है। यह तो हम जैसा ही है। तुम्हारे भ्रम टूट जायेंगे। तू गांधी के कारण अच्छा नहीं हुआ है। गांधी का भी कोई गांधी होता है।'' यह प्रत्येक जाग्रत पुरुष को जान लेना चाहिए।

मैं कहता हूं, वेद का जो 'नमो' शब्द है उसे परमात्मा माना गया है। नम्रता माने परमात्मा। कुंभजऋषि ने शिव की पूजा की। बुद्धिप्रधान सती के मन में ऊहापोह यह कि अब मेरी पूजा हो। कोई हमारी पूजा करता ही नहीं, परंतु हम में रही हुई कुदरती विशेषता को वंदन करते हैं। यह भूलना नहीं चाहिए। 'गीता' शांति से पढ़िए, उसमें लिखा है, 'मैं तेजस्वी का तेज हूं, तपस्वी का तप हूं।' अमुक प्रदेश में मूर्तियों की पूजा होती है तब जिस प्रदेश में गधों का उपयोग होता है तो मूर्ति प्रतिष्ठा पर मूर्ति गधे पर रखी जाती है और साहब, उसकी अगवानी होती है। मूर्ति पर फूल और गुलाल डाले और वह गधा सिर हिलाता जाय। उसे लगे कि ये फूलमालाएं उसे मिलती है। उसे यह पता नहीं कि यह मूर्ति नीचे उतरेगी तो मेरे मालिक को किराया देकर रुखसत करेंगे। साहब, उसी तरह हमारे भीतर रही हुई मूर्ति की पूजा होती है। बाप, उस मूर्ति के चले जाने के बाद यमराज हमें दो डंडे फटकाकर निकाल देंगे। इस तत्त्व को समझिए। इसके लिए गुरुपद जरूरी है। बिना पगलाई मौलिक श्रद्धा। मैं तो कहता हूं किसी बुद्धपुरुष के पास सदैव मत रहिए।

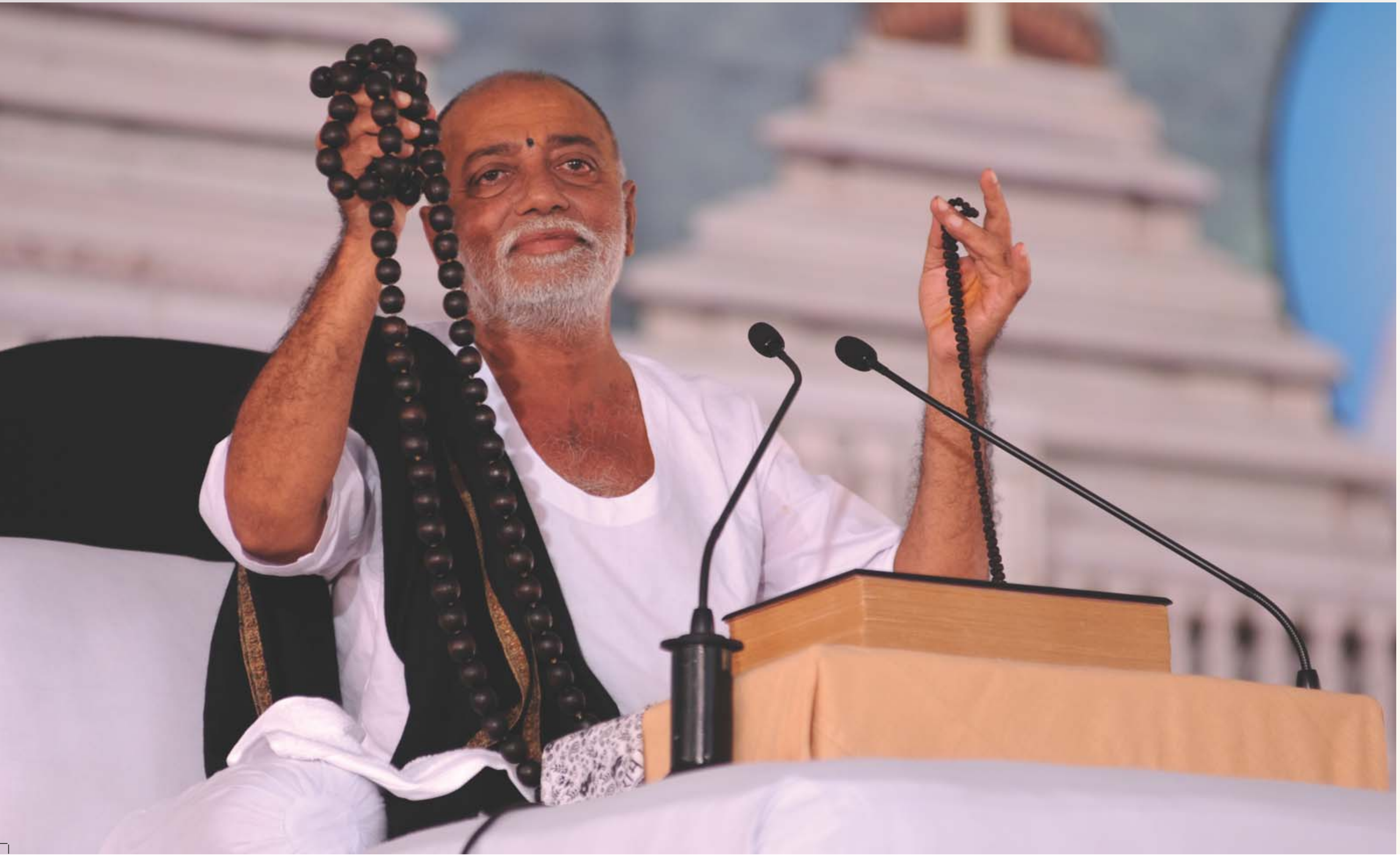

हमेशा निकट रहने की आदत डालेंगे तो दुःखी हो जायेंगे। वह दूर होता ही नहीं, पर ऐसी आदत डालनी चाहिए।

तो बाप, कुंभजऋषि की नम्रता शिव ने बराबर समझी कि धन्य है इस महापुरुष को कि उन्होंने अपनी विशेषताएं धरती पर रखी है और वक्ता होने के बावजूद भी श्रोता की पूजा की। परंतु सती के मन में बुद्धि के कारण ऊहापोह है। बुद्धि यों ऊहापोह कराती रहती है। सती ने गलत अर्थ निकाला। परिणाम यह आया कि सती भगवान की कथा सुनने की चूक गई। बैठी रही पर ध्यान नहीं दिया।

उस सती ने राम पर शंका की। सीता का रूप धारण कर राम की परीक्षा ली। और भगवान शिव राम की प्रेरणा से सती का त्याग करते हैं। सती बहुत दुःखी हुई हैं। शिव सत्ताशी हजार वर्ष तक समाधिस्थ रहे। सती ने बहुत सहन किया। शिव जगे। सती सन्मुख हुए। सती के मन को आराम मिले अतः कथा सुनाने लगे। उस वक्त दक्ष के घर यज्ञ का प्रसंग था। उन्होंने प्रतिशोध हेतु यज्ञ का आयोजन किया था। उसमें सभी देवता निमंत्रित थे। पर शिव को निमंत्रण नहीं दिया। सती ने माता-पिता के यज्ञ अवसर पर जाने की जिद्द की। सती को समझ दी पर मानी नहीं। सती दक्ष के यज्ञ में जाती है। वहां पति का अपमान देखा। सती को भी कोई सन्मान नहीं देता है, एक माँ के अलावा। यज्ञमंडप में शिव का स्थापन नहीं है। वहां देव गर्वोन्नत होकर बैठे हैं। मानवप्रकृति कितनी अजीब है किसी का अपमान होता हुआ देखकर लोग कितने खुश होते हैं! फिर भी वे देव कहलाते हैं! ऐसी मानसिकता से देव भी मुक्त नहीं है। सत्संग कब फलेगा? हमें अभ्यास से ऐसी मानसिकता निकालनी होगी। ऐसी आदत से बचिए। कभी दूर रहकर उसकी प्रेज़न्स का

अनुभव कीजिए। आखिर में वही काम में आयेगी। हां, जरूर निकट रहने का आनंद है। दुःख का कारण हम स्वयं होते हैं। ऐसा तुलसी और शास्त्र कहते हैं। हमें और कोई दुःख नहीं देते। या तो अपना स्वभाव या अपनी वृत्तियां, या अपनी जात। हमारे ही नेट वर्क दुःख देते हैं। तुलसी की एक पंक्ति है -

काहु न कोउ सुख दुख कर दाता।

निज कृत करम भोग सब भ्राता।।

लक्ष्मणजी ने कहा कि, हे गुह्यराज, कोई किसी को दुःख नहीं देता। सुख नहीं देता। सुख-दुःख के कारण हम स्वयं है। हमें सुखी होना हो तो कोई माई का लाल पैदा नहीं हुआ कि हमें सुख से वंचित रख सके और दुःखी ही होना है तो ब्रह्मा भी हमें सुखी नहीं कर सकते।

दक्षकन्या सती यज्ञमंडप में शिव का अपमान सहन नहीं कर सकी। फिर वह अपनी देह यज्ञकुंड को समर्पित करती है। आखिरी क्षण में सती ने परमात्मा से मांग की कि मुझे जनम दर जनम शिव के चरणों में अनुराग हो। भगवान महादेव ही पतिरूप में प्राप्त हो। तुलसी कहते हैं इसीलिए हिमालय के घर, पर्वत के यहां पार्वतीरूप में सती का प्राकट्य हुआ।

व्यासपीठ का काफी पुराना निवेदन है कि वही शक्ति दक्षकन्या थी तब वह बुद्धिस्वरूपा थी। वही शक्ति हिमालय कन्या बनी तब श्रद्धा में उसकी परिणति हुई। सती का चरित्र, माँ अंबा की यह दिव्यकथा इसका प्रधानसूत्र यह है कि वो हमें बौद्धिकता से हार्दिकता में दीक्षित करे वही सतीचरित्र है। तत्त्व वही है। मैंने अनुभव किया है कि हमारी चेतना जब बहिर्मुख होती है तब वह बुद्धि है। वही चेतना जब अंतर्मुखी बनती है तब वह श्रद्धा है। चेतना एक ही है। सती की चेतना बहिर्मुखी थी तब तक वह बुद्धि थी और उसी हिमालय के यहां जन्म लिया और वही चेतना अंतर्मुख हुई तो मेरी व्यासपीठ के निज मतानुसार वह श्रद्धा में परिवर्तन होती है। तुलसीदासजी मंगलाचरण में कहते हैं, 'भवानीशंकरौ वन्दे श्रद्धाविश्वासरूपिणौ।' मौलिक श्रद्धा है। यह न अंधश्रद्धा है, न अश्रद्धा है। श्रद्धा तो चाहिए ही। श्रद्धा वसंतऋतु है। अंधश्रद्धा नहीं। पाखंड-प्रपंच नहीं। अभी भी हमारे समाज में जो बलिप्रथा है यह भगवान की कथाश्रवण बाद इस नौरात्रि में निकल जानी चाहिए। हमारी ममता और अहंता की बलि चढ़नी चाहिए। बलिप्रथा बंद करें। आपको कोई मुश्किल पड़े तो यह सारी जिम्मेवारी उठाने के लिए मैं तैयार हूं।

तो बाप, श्रद्धा चाहिए। पार्वती के रूप में सती श्रद्धा हुई। हिमालय के यहां पुत्री ने जन्म लिया तो हिमालय की समृद्धि में वृद्धि हुई। हिमालय के यहां बिन बुलाए सब संत मेहमान बने। आपके यहां भी पुत्री जन्म पर बिन बुलाए संत आयेंगे। आपकी समृद्धि में वृद्धि होगी। आपके यहां भक्ति आई हैं। नव ब्याहता ऐसी मनोकामना रखे कि उनके यहां सबसे पहले पुत्री का ही जन्म हो। 'भगवद्गीता' में तो भगवान श्रीकृष्णने सात-सात विभूतियों के दर्शन किए हैं। वेद में सात मर्यादा का जो वर्णन है वह मातृशरीर में सिद्धि है।

तो, हिमालय के यहां पार्वती का प्राकट्य हुआ तब बहुत बड़ा उत्सव हुआ। ऋषिमुनि आए। प्रदेश की समृद्धि बढ़ी। पुत्री बड़ी होने लगी। फिर एक दिन नारदजी वीणा बजाते-बजाते हिमाचल प्रदेश आए। नगाधिराज हिमालय के मेहमान बने। तब हिमालय और उनकी पत्नी मैना ने अपनी पुत्री पार्वती, उमा को नारदजी के चरण स्पर्श करवाते हुए कहा, 'बापजी, आप आशीर्वाद दीजिए। इस कन्या का नामकरण आप कीजिए।' तब तुलसीदासजी ने यह चौपाई लिखी -

सुंदर सहज सुसील सयानी।

नाम उमा अंबिका भवानी।।

नारदजी बहुत बुद्धिमान है। प्रभु की विभूति है। उन्होंने सोच समझकर नामकरण किया। आप शांति से इस पंक्ति पर विचार कीजिए। इसके पूर्वार्ध में विशेषण है और उत्तर भाग में संज्ञा है। पहला विशेषण पीछे की अर्धाली में पहले नाम को लागू पड़ता है। दूसरा विशेषण पीछे की अर्धाली में दूसरे नाम को लागू है और तीसरा विशेषण तीसरे नाम को लागू होता है। प्रथम तीन विशेषण 'सुंदर सहज' सहज सुंदर है। दूसरा 'सुशील', सुशील है और तीसरा 'सयानी' बेटी सयानी है। उसमें सयानापन है। ये तीन विशेषण है और फिर इसे तीन नाम के साथ जोड़ते हैं। तत्त्व एक ही है। परंतु ये तीन नामों के तीन विशेषण हैं। उमा सहज सुंदर है। वह पार्वती ही है। एक ही है। उमा सहज सुंदर है। अंबिका सुशील है। क्योंकि वह हृदय है। पता नहीं क्यों हमारा हृदय कुटिल बन गया है! हृदय का मूल स्वभाव सुशील है। माँ का हृदय सुशील होता ही है। फिर सयानी भवानी। जब-जब पार्वती का सयानापन अलग-अलग संदर्भों में दिखाई देता है तब-तब तुलसी प्रायः उनका परिचय भवानी के रूप में कराते हैं। जब-जब सयानी रूप आए तब-तब भवानी। सुशीलरूप आए तब यह अंबिका और सहज सुंदर आए तब उमा है। 'रामायण' में तो माँ अंबा के कितने नाम आए हैं! जब किसी विशिष्ट प्रसंग पर प्रत्येक नाम प्रयुक्त करता है तब पूरे अर्थ बदल जाते हैं। इस तरह तीन विशेषण और तीन संज्ञाओं को जोड़कर यह पहली पंक्ति है। अंबिका जगदम्बिका है। ऐसा मानकर देवता माँ अंबा को मन ही मन प्रणाम करती हैं। ऐसी दूसरी पंक्ति एक अलग संदर्भ में है। पर 'अंबिका' शब्द लेना था अतः दूर की पंक्ति उसके साथ जोड़ी है।

तो, 'मानस-अंबिका' को केन्द्र में ये दो पंक्ति यां रखकर हम इस नौरात्रि में 'मानस' की चौपाईयों द्वारा माँ अंबा के दर्शन करें। मुझे कई बार लगता है कि चौपाई मेरा चश्मा है। मैं चौपाई का चश्मा पहनूं तब मुझे गुरुकृपा से ये संदर्भ ज्यादा दिखाई देते हैं। एक बिनती, इन दिनों तंत्रपूजा बहुत होती है पर हम जैसे सीधे-सादे आदमियों को शक्ति की तंत्रपूजा में नहीं पड़ना चाहिए। माँ को सात्त्विक भाव से भजे। भगवती के अनेक स्वरूप हमारे नख से शिखा तक रक्षा करते हैं।

'मानस' में माँ अंबिका का जो स्वरूप है ऐसी अंबिका की स्तुति माँ जानकी करती है। आप प्रसंग

अभी भी हमारे समाज में जो बलिप्रथा है यह भगवान की कथा-श्रवण के बाद इस नौरात्रि में निकल जानी चाहिए। हमारी ममता और अहंता की बलि चढ़नी चाहिए। माँ बलि नहीं चाहती। आप बलिप्रथा बंद करें। आपको कोई मुश्किल पड़े तो यह सारी जिम्मेवारी उठाने के लिए मैं तैयार हूं। इन दिनों तंत्रपूजा बहुत होती है पर हम जैसे सीधे-सादे आदमियों को शक्ति की तंत्रपूजा में नहीं पड़ना चाहिए। माँ को सात्त्विक भाव से भजे। भगवती के अनेक स्वरूप हमारे नख से शिखा तक रक्षा करते हैं।

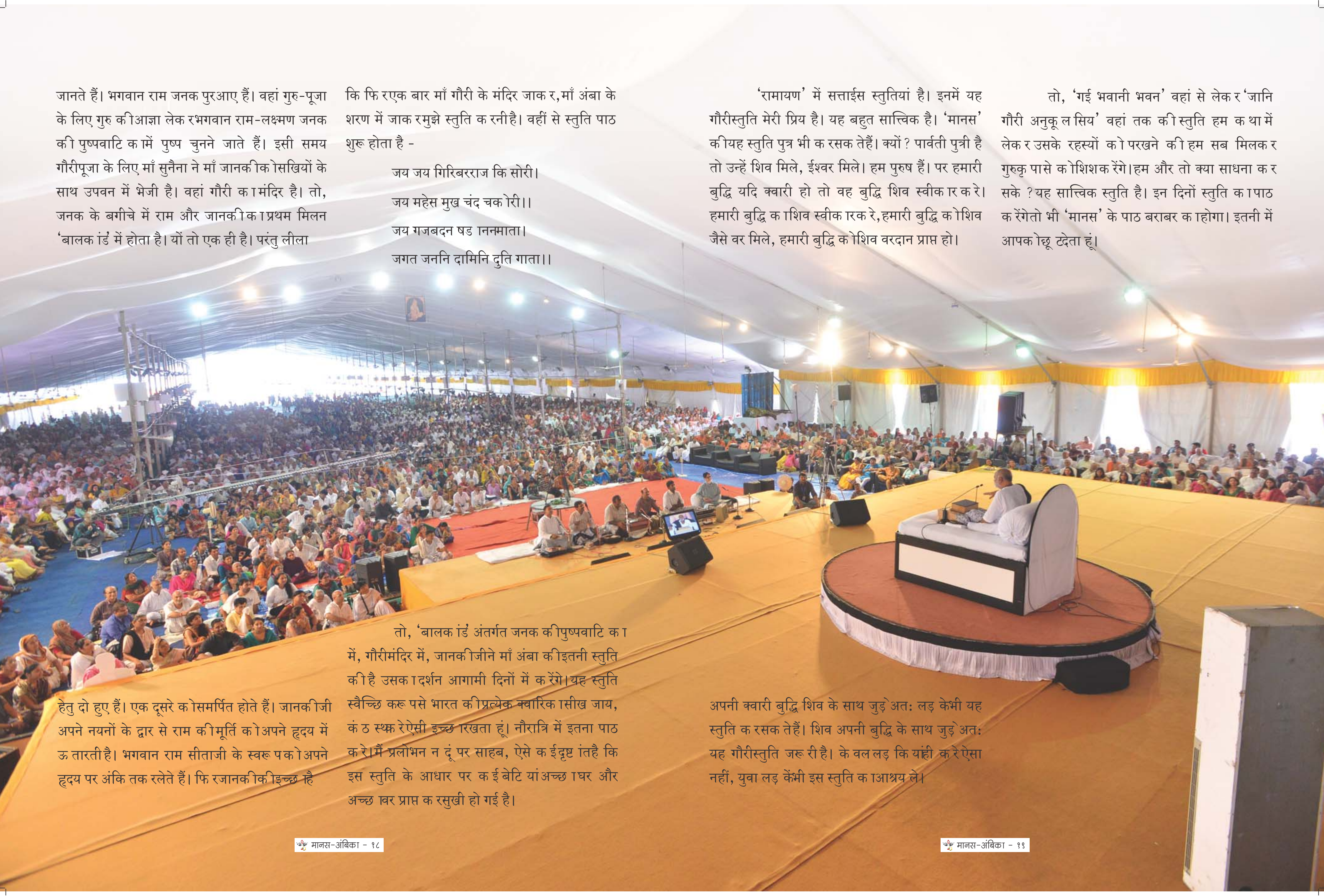

जानते हैं। भगवान राम जनकपुर आए हैं। वहां गुरु-पूजा के लिए गुरु की आज्ञा लेकर भगवान राम-लक्ष्मण जनक की पुष्पवाटिका में पुष्प चुनने जाते हैं। इसी समय गौरीपूजा के लिए माँ सुनैना ने माँ जानकी को सखियों के साथ उपवन में भेजी है। वहां गौरी का मंदिर है। तो, जनक के बगीचे में राम और जानकी का प्रथम मिलन 'बालकांड' में होता है। यों तो एक ही है। परंतु लीला हेतु दो हुए हैं। एक दूसरे को समर्पित होते हैं। जानकीजी अपने नयनों के द्वार से राम की मूर्ति को अपने हृदय में उतारती है। भगवान राम सीताजी के स्वरूप को अपने हृदय पर अंकित कर लेते हैं। फिर जानकी की इच्छा है कि फिर एक बार माँ गौरी के मंदिर जाकर, माँ अंबा के शरण में जाकर मुझे स्तुति करनी है। वहीं से स्तुति पाठ शुरू होता है -

जय जय गिरिबरराज किसोरी।
जय महेस मुख चंद चकोरी।।
जय गजबदन षडानन माता।
जगत जननि दामिनि दुति गाता।।

तो, 'बालकांड' अंतर्गत जनक की पुष्पवाटिका में, गौरीमंदिर में, जानकीजी ने माँ अंबा की इतनी स्तुति की है उसका दर्शन आगामी दिनों में करेंगे। यह स्तुति स्वैच्छिक रूप से भारत की प्रत्येक क्वारिका सीख जाय, कंठस्थ करे ऐसी इच्छा रखता हूं। नौरात्रि में इतना पाठ करे। मैं प्रलोभन न दूं पर साहब, ऐसे कई दृष्टांत है कि इस स्तुति के आधार पर कई बेटियां अच्छा घर और अच्छा वर प्राप्त कर सुखी हो गई है।

'रामायण' में सत्ताईस स्तुतियां है। इनमें यह गौरीस्तुति मेरी प्रिय है। यह बहुत सात्त्विक है। 'मानस' की यह स्तुति पुत्र भी कर सकते हैं। क्यों? पार्वती पुत्री है तो उन्हें शिव मिले, ईश्वर मिले। हम पुरुष हैं। पर हमारी बुद्धि यदि क्वारी हो तो वह बुद्धि शिव स्वीकार करे। हमारी बुद्धि का शिव स्वीकार करे, हमारी बुद्धि को शिव जैसे वर मिले, हमारी बुद्धि को शिव वरदान प्राप्त हो। अपनी क्वारी बुद्धि शिव के साथ जुड़े अतः लड़के भी यह स्तुति कर सकते हैं। शिव अपनी बुद्धि के साथ जुड़े अतः यह गौरीस्तुति जरूरी है। केवल लड़कियां ही करे ऐसा नहीं, युवा लड़के भी इस स्तुति का आश्रय ले।

तो, 'गई भवानी भवन' वहां से लेकर 'जानि गौरी अनुकूल सिय' वहां तक की स्तुति हम कथा में लेकर उसके रहस्यों को परखने की हम सब मिलकर गुरुकृपा से कोशिश करेंगे। हम और तो क्या साधना कर सके? यह सात्त्विक स्तुति है। इन दिनों स्तुति का पाठ करेंगे तो भी 'मानस' के पाठ बराबर का होगा। इतनी में आपको छूट देता हूं।

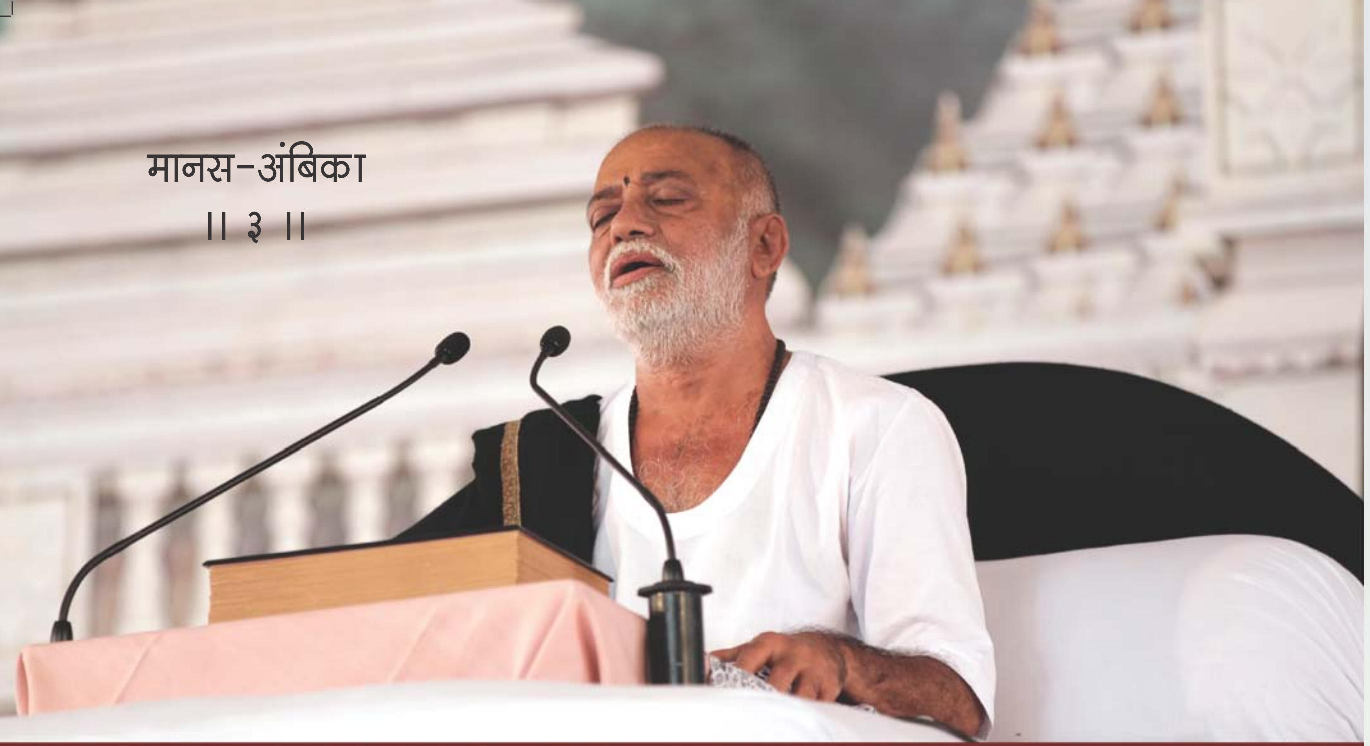

मानस-अंबिका

।। ३ ।।

जगदंबा के पुत्री, पत्नी और माता जैसे त्रिस्तरीय रूप है

'मानस-अंबिका', माँ अंबा के धाम में 'रामचरित मानस' अंतर्गत माँ के बारे में जो बातें हो रही है उन्हें हम सात्त्विक-तात्त्विक रूप में एक संवाद रूप में गा रहे हैं। जनक की पुष्पवाटिका में, गौरीमंदिर में जानकीजी सखियों के संग गौरीस्तुति करती है। माँ अंबा की स्तुति हेतु हमने गौरीस्तुति का प्रसंग पसंद किया। इन दो चौपाई के शीर्षक अंतर्गत हम आगे बढ़ें इससे पहले पंचतंत्र की एक छोटी-सी कहानी सुनानी है। इसमें माँ के कई स्वरूपों में रहे अमुक तत्त्वों का परिचय बहुत आसानी से प्राप्त कर सकेंगे।

एक राजा के यहां पुत्री जन्म हुआ। वह पुत्री दिन दुगुनी रात चौगुनी बढ़ती गई। अत्यंत स्वरूपवती थी पर शरीर में एक विचित्रता थी। मातृशरीर में दो पयस्थान होते हैं पर इसके तीन पयस्थान थे। पंडित बुलाए फिर नामकरण किया और उसका नाम 'त्रिस्तनी' रखा। राजा और उसके परिवार को यह जानने की इच्छा हुई कि हमारी कन्या के भीतर तीन उभार है वो राज्य के लिए शुभ होंगे या अशुभ? फिर कितने ही पंडित देश-विदेश से बुलाए गए। पंडितों ने मिलकर राजा से कहा कि इस पुत्री का जन्म आपके राष्ट्र का विनाश करेगा। एक सूर ऐसा निकला कि कन्या को मार डालें। सत्ता बचाने हेतु एक चेतना को मार डालना ये वृत्तियां शायद पुराने जमाने की है। फिर राजा ने ऐसा कहा कि, 'रानी ऐसा कहती है कि क्या कन्या के लिए ओर कोई विकल्प नहीं है? क्या जप-व्रत नहीं हो सकते?' फिर काशी से पंडित बुलाए गए। वे कच्चे हो तो भी प्रमाणपत्र प्राप्त होते हैं! पंडितों का सन्मान हुआ। उन्होंने निराकरण बताया कि

इस कन्या से कोई ब्याह करे और इसके बाद दोनों को देशनिकाला दिया जाए तो राज्य सुरक्षित रहेगा। प्रश्न था कि ऐसी कन्या से कौन ब्याह करे?

कोई राजवंशी इसका स्वीकार नहीं करेगा। फिर पंडितने ऐसा उपाय बताया कि जो इस कन्या से ब्याह करेगा उसे सवा लाख सुवर्ण महोर का दहेज मिलेगा। पर ब्याह हो जाने के बाद देश निकाला होगा। गांव में अंधक और कुब्जक नामक दो लड़के थे। अंधक अंधा था और कुब्जक की कमर टेढ़ी थी। वह अंधक की अगवानी करे। लोग इन्हें पैसे दे फिर दोनों वितरित कर ले। दोनों ने सुवर्णमहोर की घोषणा सुनी। कुब्जक ने कहा, मैं तो विकलांग हूं। तू भले अंधा रहा। पर तू सर्वांग सुंदर है। तेरा ब्याह उसके साथ हो जाय और सवा लाख सुवर्णमहोर लेकर साथ रहे। अंधक को भी इसमें कुछ गलत नहीं लगा। कुब्जक इसे लेकर राजदरबार में गया। राजा ने कहा, ब्याह के बाद देशनिकाला होगा। ब्याह की तैयारी होने लगी। शीघ्र ब्याह हुआ। अंधक और राजकुमारी का ब्याह हुआ। फिर तीनों को देशनिकाला दिया गया। राजा को आराम मिला!

ये तीनों दूसरे राज्य में रहने लगे। अंधक कुछ देखता नहीं है, कुब्जक और त्रिस्तनी देख सकते हैं। खूबसूरत है। समय जाते कुब्जक और त्रिस्तनी के बीच विशेष भाव जन्मा। अंधा कुछ देख नहीं पाता। बात यहां तक पहुंच गई कि कुब्जक और त्रिस्तनी ने निर्णय लिया कि अंधे को मार डाले। पर कैसे? कुब्जक ने कहा, 'कभी-कभी हम दोनों साथ हो तो रसोई में कहूंपर उसमें कुछ हिलाने का हो तो अंधक बैठा-बैठा हिलाया करे।'

कुब्जक ने एक सांप पकड़ उसके टूकड़े किए और पानी में उबाले। फिर उस अंधक को खटिया पर बिठाकर कहा कि, 'ले यह कडछी और सब्जी को हिलाते रहना।' वो बेचारा आधे घंटे तक कडछी घूमाता है। पानी उबालता है। इस दौरान कुब्जक और त्रिस्तनी प्रेमालाप करते हैं।

साहब, हुआ ऐसा कि पानी से जो भाप निकली वो अंधक की आंखों में गई और पंद्रह मिनिट में उसकी नज़र लौट आई! पहली बार अपनी आंखों से जगत को देखने लगा। खुश हुआ। पर दुःखी भी हुआ। उसे जगत का पहला दृश्य विचित्र दिखाई दिया! खुद का जिगरी दोस्त कुब्जक और त्रिस्तनी अभद्र चेष्टाओं में डूबे हुए थे। अब अंधक को रोष आया। उसने लाठी उठाई और कुब्जक के कूबड़ पर दे मारी। उसकी कूबड़ टूट गई। वह सीधा हो गया। पर वह गिरा त्रिस्तनी पर। फलतः त्रिस्तनी के शरीर का तीसरा उर भाग छाती में समा गया। अब स्त्री सर्वांग सुंदर हो गई। यों तीनों बिलकुल ठीक हो गए।

यह कहानी क्यों कही? बाप, त्रिस्तनी एक स्त्री है। वह केन्द्र में होने के कारण तीन महत्त्वपूर्ण कार्य हुए। अंधे को आंख मिली, कूबड़ टूट और स्वयं त्रिस्तनी पूर्ण बनी। तो, केन्द्र में त्रिस्तनी है। एक नारी का यह त्रिस्तनीपन तीन छट खड़े करता है। अंबा त्रिस्तनी नहीं पर त्रिस्तरीय है। इस जगदंबा के तीन स्तर है जिससे वे कितकितनी वस्तु सीधी करती है। जगदंबा त्रिस्तरीय होती है। इसीसे शायद नारदजी नामकरण में तीन विशेषण और तीन संज्ञा का उपयोग करते हैं, क्योंकि कोई भी माँ तीन स्तर पर कृपा करती है। चौपाई है -

सुंदर सहज सुसील सयानी।
नाम उमा अंबिका भवानी।
जगदंबिका जानि भव भामा।
सुरन्ह मनहि मन कीन्ह प्रनामा।।

तो, पराम्बा माँ तीन स्तर पर काम करती है। वह त्रिस्तरीय है। इसीलिए वे स्त्री है। मेरी व्यासपीठ को लगता है इस पंक्ति में त्रिस्तर बताए हैं। एक तो सहज सुंदरता, दूसरा सुशीलता और तीसरा सयानता और 'नाम उमा अंबिका भवानी।' माँ के तीन स्तर होते हैं। हमारे यहां कहा गया है स्त्री के तीन स्तर होते हैं। एक वह किसी की कन्या है, वह किसी की धर्मपत्नी है, वह किसी की माँ है। किसी भी स्त्री शरीर में अंश अंबा का ही होता है। ऐसा मानते हुए स्त्री का सन्मान होना ही चाहिए। इस त्रिस्तर पर यह महाशक्ति काम करती है। ऐसा त्रिस्तरीय परिचय 'रामचरित मानस' ने दिया है। जानकी और माँ अंबा के बारे में दिया है। जानकीजी के त्रिस्तर की वंदना तुलसीदासजी वंदना प्रकरण में करते हैं -

जनक सुता जग जननि जानकी।
अतिसय प्रिय करुनानिधान की।।

जनक सुता माने कन्या। यहां तीन स्तर है। फिर वह किसी की पत्नी है। पर यहां क्रम टूट है। फिर तुरंत कहते हैं, 'जग जननि जानकी', जगत की माँ और 'अतिसय प्रिय करुनानिधान की' राम की अतिप्रिय पत्नी। ऐसे तीन स्तर है।

हम कल जानकीजी के साथ गौरीमंदिर में गए और जानकीजी वहां गौरी स्तुति करती है, तब पहली बात उन्होंने त्रिस्तर की बताई -

जय जय गिरिबरराज किसोरी।
जय महेस मुख चंद चकोरी।।
जय गजबदन षडानन माता।
जगत जननि दामिनि दुति गाता।।

यहां इस त्रिस्तरीय मातृत्व की चर्चा है। तुलसी का यह दर्शन है। 'जय जय गिरिबरराज किसोरी' तू हिमालय की पुत्री है। यों तो सभी नाम पर्याय है। परंतु नारद ने जो तीन नाम दिए, त्रिस्तर खड़ा किया - उमा, अंबिका, भवानी - उसमें 'जय जय गिरिबरराज किसोरी' वहां उमा का उल्लेख है। तू उमा है। उमा हिमालय की पुत्री है।

जब तें उमा सैल गृह जाईं।
सकल सिद्धि संपति तहँ छाईं।।

जब हिमालय के घर पार्वती का जन्म हुआ तब तुलसीदासजी ने उमा नाम दिया अतः कन्या के रूप में उमा है।

अब दूसरा स्तर, 'जय महेस मुख चंद चकोरी' माने पत्नी। शंकर पत्नी अंबिका। 'जगदंबिका जानि भव भामा।' भामा माने पत्नी, भव माने शंकर। दूसरा स्तर माने यह अंबिका शंकर की पत्नी है। तीसरा स्तर, गणपति और कार्तिकेय की माता। सामान्य स्त्री अपने दो-तीन बच्चों की माँ है। पर तू तो गणेश और कार्तिकेय की माता है। जगदंबा हो, समस्त जगत की माता हो।

ये तीन स्तर हुए। कन्या का स्तर कैसा है? हिमालय की पुत्री तो खानदान कितना बड़ा! कैसी निष्ठा में से जन्मी पार्वती! कन्या का रूप हमें समझाता है कि मैं जिनकी पुत्री हूं वे अचल, स्थित है। मैं कोई अस्थिर या जिनकी निष्ठा भटकती हो इसकी संतान नहीं हूं। यह माँ हमें बताती है, 'गीता' जिसे व्यभिचारिणी बुद्धि कहती है वह मैं नहीं हूं। पुत्रीत्व निष्ठा की स्थिरता है। हमारी मजबूती निष्ठा से उत्पन्न हो वही उमा तत्त्व है। यही शक्तित्व है। हमारी निष्ठा मजबूत रहे।

हमें तीन कार्य करने हैं। आप समझे ऐसी मेरी प्रार्थना है। एक, जहां से अच्छी समझ मिले स्वीकार ले। जहां से शुभ मिले, ले ले। दूसरा, अंधश्रद्धा या अश्रद्धा की बात नहीं करता पर जीवन में श्रद्धा का कोई विकल्प नहीं है। दुनिया की सर्वोच्च प्रज्ञा का यह लक्षण है कि आपको जहां अच्छा लगे ग्रहण कीजिए। संकीर्णमत बनिए। पर कोई सूत्र आपके भजन को निर्बल करे ऐसे संग से भी सावधान रहिए। वह आपके लिए कुसंग है। श्रद्धा का कोई विकल्प नहीं होना चाहिए। आपके गुरु आपका सब कुछ करे तब तक श्रद्धा रहे, फिर आपकी इच्छा के अनुसार न हो तो आप प्रतिकूल हो जाय! मैं तो गुरु नहीं हूं। पर मैं उदासीन भी रहता हूं। सबके साथ डिस्टन्स बनाए रखता हूं। लोगों का स्वार्थ पूरा न हो तो उनकी श्रद्धा विकल्प ढूंढती है! मुझे क्या?

मैं अकेला ही यूं ही मझे में था,
मुझे आप किसलिए मिल गए?
मुझे दर्दे दिल का पता न था,
मुझे आप किसलिए मिल गए?

मेरे श्रावक भाईयों और बहनों, तीन बातें याद रखिए। शुभ मिले सो ले लीजिए। अपनी श्रद्धा का कोई विकल्प न हो। हां, अंधश्रद्धा को मान्यता न दें। आप स्वयं ही अस्तित्व का चमत्कार है। चमत्कार, काला धागा आदि में न माने। तीसरा, किसी की विशेष कृपा मिली हो तो उस विशेषता का अहंकार न करे। प्राचीन भजन है -

गरव कर्यो ओल्यां लंकापतिरावणे,
गरव कर्यो सो नर हार्यो ...

हम वैसे भी क्या विशेष है? आज मुझसे एक भाई ने प्रश्न पूछा था कि, 'बापू, आप सुबह में व्यासपीठ से स्तुति करते हैं तब आंखे बंद कर स्थित होते हैं एक मिनिट के लिए, तो आप किसका ध्यान धरते हैं?' मैं अपना ध्यान धरता हूं कि मैं बराबर हूं? कथा कहने लायक हूं? किसी दूसरे में ध्यान नहीं लगता। मुझसे कोई ध्यान होता भी नहीं है। ध्यान रखने की पूरी कोशिश करता हूं। कौन-सी विशेषता? यह प्रभाव 'रामायण' का है। यह न हो तो कुछ भी नहीं है। इस झिंझिया के उजालें में हम गांव गांव नौरात्रि मनाते हैं। जहां से शुभ मिले कुबूल कीजिए। दोषदर्शन बिलकुल बंद कर दीजिए। विशेषता का

पराम्बा माँ तीन स्तर पर कार्य करती है। वह त्रिस्तरीय है। इसीलिए शायद उसे 'स्त्री' कहते हैं। अपने यहां कहा गया है, स्त्री के तीन स्तर है। एक, वह किसी की कन्या है। दूसरा, वह किसी की धर्मपत्नी है। तीसरा, वह किसी की माँ है। कोई भी स्त्री शरीर अंबा का अंश है। ऐसा मानकर स्त्री का सन्मान होना चाहिए। इस तीन स्तर पर यह महाशक्ति कार्य करती है। इन तीनों स्तर का परिचय 'रामचरित मानस' ने दिया है। जानकी और माँ अंबा के विषय में भी परिचय दिया है।

अहंक ारमत रखिए। जीवन भारी नहीं, फू लजैसा होना चाहिए। इस भार के क ारणउड़ ानभर नहीं पाते।

तो, उमातत्त्व निष्ठ ा है। अंबिक ा, शिव की पत्नी माने श्रद्धारू प है। मौलिक श्रद्धा अंबा है। फि र भवानी है वह जगजननी है। यह तीसरा स्तर है। पूरे विश्व की माँ है। माँ भवानी के दो ही पुत्र गणपति और क ार्तिके यऔर हम क ोईनहीं? गणेश क ोगणेश स्वरू प देखेंगे, क ार्तिके यक ो क ार्तिके यस्वरू पदेखेंगे तो दोनों की माता माँ भवानी है। पर यह तो संकीर्णपरिचय हुआ। हम भी उनकी संतान है। कि स अर्थ में? गणेश माने विवेक और क ार्तिके यमाने पुरुषार्थ। तुलसीदास ने क ार्तिके यक ोआध्यात्मिक अर्थ में पुरुषार्थ माना है। जो समाज में पुरुषार्थ क रताहोगा, विवेक से क रताहोगा, ये दो लक्षण जिनमें होंगे ऐसे पूरे विश्व की तू माँ है। विवेक

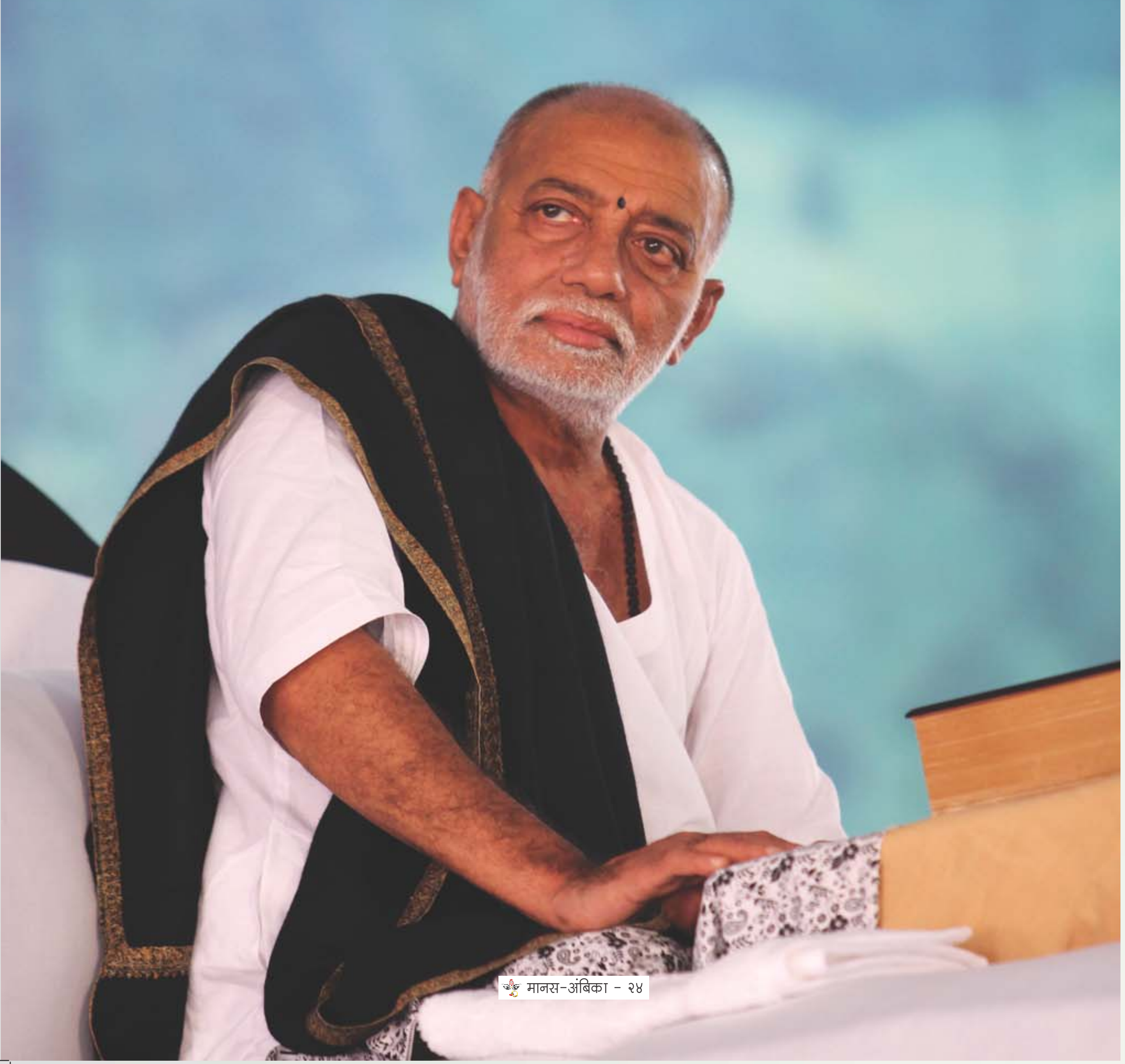

होगा तो हम उनके गणेश है और हममें विवेक पूर्ण पुरुषार्थ होगा तो हम भी माँ भवानी के क ार्तिके यहै।

जगत में विवेक है, विवेक पूर्णउद्यम है, मेहनत है, स्वाश्रय है इसकी तू माँ है। अंबा माँ क ापूरा फे मिली तो देखो! यों देखें तो ठ ीकदिखाई नहीं देता और वैसे देखें तो सब संयुक्त !पति के पांच मुंह! गणपति क ोहाथी क ा मस्तक !क ार्तिकस्वामी के छ :मुंह! पार्वती की कि तनी सारी भुजाएं! यह क्या है? इन समस्त विविधता क ो जगदंबा संयुक्त क र,भेदमुक्त क रइन सबक ाजतन क रती है। यह जगत वैविध्यपूर्ण है। मातृहृदया माँ अंबा इन सारी विविधता क ोएक तामें समेट तीहै। इस गरबा में विविधता रहते हुए भी एक ता है। यह अंबा ही क र सक तीहै। हम विविध होते हुए भी एक है। ऐसा भाव रखना पड़ ेगा।शिव की एक रात्रि और इस माँ की नौ-नौ रात्रि, क्योंकि इसे सबक ोएक त्रक रनाहै। शक्ति हो तब शिव भी दुर्बल पड़ जाते हैं। ‘रामायण’ में एक भी प्रसंग बताईए साहब कि जानकीहो तब राम ने राक्षस क ोमारा है। माँ हो तब कि सी बालक क ोमरने ही न दे। माँ जानकीभी अंबा है। ये सभी तत्त्व एक ही है। उसे अलग-अलग नहीं क रसक ते।हा, जिस समय जिसकीविशेषता है यही माँ क ादर्शन है। बाकी,ये सभी तत्त्व एक ही है। हमारी जानकीजन्म लेने के बाद क हांबैठ ीहै? सीता जगदंबा है। शंक रभगवान ने जो धनुष जनक जीक ोदिया था उसी धनुष क ोघोड़ ाबनाक रजानकीबैठ ीथी। यह इनकी पहली बैठ क ।फि रक हां बैठ ी?ब्याह होने पर पालकीमें बैठ ी।तीसरी वन में जाने क ोहुआ तो रथ में बैठ ी।फि र पैदल चली। पर जब लीला शुरू की तो जानकीजीअग्नि पर बैठ ी।ये सब जानकीजीकीपीठ है। आखिर में वायुयान में बैठ ी।फि रविश्व क ोरामराज्य देने के लिए राम के क हनेपर सिंहासन पर बैठ ी।यह आखिरी पीठ थी। फि रभूमि में समा गई। इतनी पीठ में जानकी परिवर्तित हुई है। इसके सभी तात्त्विक अर्थ है। ये ‘रामचरित मानस’रू पीझिंझिया के छि द्रनहीं है, द्वार है। जिसमें से प्रक ाशपुंजबाहर निक लताहै।

तो, जगदंबा अंबिक ातीन स्तर पर क ार्यक रती है। क न्या, धर्म पत्नी और माँ के स्तर पर। ऐसी माँ अंबिक ाकीझांकी ‘रामचरित मानस’ के आधार पर हम क ररहे हैं। इन स्तुति में मेरी व्यासपीठ के तीन स्तर दिखाई दिए।

अब थोड़ ा क था क्रम लूं। ‘रामायण’ में हनुमानजी की वंदना क रने के बाद सभी वंदना तुलसीदासजी ने की।क्योंकि गुरु कीरज से नेत्र पवित्र बने फि र पूरा जगत वंदनीय ही बनता है। फि र तुलसीदासजी ने क लियुगमें मेरे और तुम्हारे जैसे जीव के लिए नाममहिमा क ागायन कि याथा। ‘रामायण’ के नौ दोहों में, पूर्णांक में रामनाम कीमहिमा कीहै -

बंदऊं नाम राम रघुबर क ो।

हेतु कृ सानुभानु हिमक रक ो।।

गोस्वामीजी क हतेहैं, रामनाम अग्नि क ाबीज है, चंद्र क ा बीज है, सूर्य क ा बीज है। रामनाम विष्णुसहस्रनाम तुल्य है। चारों युग में रामनाम कीमहिमा है। चारों वेद में रामनाम कीमहिमा है। यह ‘रामनाम’ क हूंतो क ोईसंकीर्णअर्थ मत क रना।आपकीजिस नाम में श्रद्धा हो वह नाम रखना। राम बहुत विशाल है। आप क्रि ष्न, माँ, अल्लाह जो भी नाम ले सब एक ही है। भगवान के नाम कीमहिमा बहुत गाई। मेरा क ोईआग्रह नहीं कि आप रामनाम रटि ए।आपके गुरु ने आपक ोजो नामदान कि याहो उसमें आपकीश्रद्धा और रुचि हो ये सभी नाम हरिनाम है।

हम गांव के रहनेवाले खेत जोते, मज़दूरी करे। सत्युग में लोग ध्यान धरते थे। हम कलियुगमें ध्यान न कर सके।हो सके तो अच्छा है। फिर त्रेतायुग में यज्ञ बहुत होते थे। फिर द्वापरयुग में भगवान की पूजा-अर्चना होती थी। फिर कलियुग आया। तब सभी शास्त्रों ने और संतों ने एक ही स्वर में कहा कि, कलियुगमें केवल नाम का आधार होगा। भरोसा रखिए। यह हकीकत है। चैतन्य महाराज ने तमाम शास्त्र गंगा में बहा दिए और केवल ऊर्ध्वबाहु होकर 'हरिबोल' का नारा लगाकर वे समा गए। मैंने कईबार कहा है कि मैं यह कथा कहूं पर मेरी निष्ठा नाम की है। कलियुग में किसी और साधना की जरूरत नहीं है। सभी साधना थकान बढ़ा देती है। नाम में किसी विधि की भी जरूरत नहीं है। विश्वास जरूरी है। जीवन जीने जैसा है। मरने की जलदबाजी न करे।जलन मातरी का शे'र है -

त्यां स्वर्ग ना मळे तो मुसीबतनां पोट लां,

मरवानी एटलेमें उतावळ करीनथी.

तुलसी ने बहुत राहत दी। चैतन्य महाप्रभु ने नामस्मरण के साथ दस अपराधों की चर्चा की।जो नाम संकीर्तन करे उसे दस अपराधों से बचकर करने का उन्होंने आग्रह रखा। परंतु तुलसी ने अपने जैसे इस कलियुगके जीवों को बहुत राहत दी और ऐसा कहा कि भाव से हरिनाम लो तो उत्तम। भाव न जगे और दुर्भाव से लो तो भी चिंता नहीं। आलस्य और प्रमोद से लो तो भी चिंता नहीं। नामस्मरण करनेसे दसों दिशाएं पावन होगी। गांधीजी ने कहा है कि, मेरे जीवन की अति मुश्किल क्षणों में नाम ने बहुत राहत दी है। मेरे श्रावक भाईयों और बहनों, प्रभु के नाम का आश्रय बहुत कीजिए।नाम की महिमा बहुत है। नाम छोड़ना नहीं।

'रामायण' में नाम का पूरा प्रकरण है। फिर रामकथा का आरंभ होता है। नाम 'रामचरित मानस' रखा। 'मानस' माने मानसरोवर। किसी भी सरोवर को चार घाट होते हैं। यों इस रामकथा के चार घाट है। एक ज्ञानघाट जहां शिवजी कथा कहते हैं; पार्वती कथा सुनती है। दूसरा कर्मघाट - गंगा, यमुना और सरस्वती त्रिवेणी तट पर! वहां परमविवेकी याज्ञवल्क्य महाराज कथा कहते हैं और भरद्वाजजी कथा सुनते हैं। तीसरा घाट हिमालय में नीलगिरि पर्वत का जो उपासना घाट है। जहां कागभुशुंडि जी कथा कहते हैं और गरुड कथा सुनते हैं। चौथा घाट तुलसी का है शरणागति घाट।उस घाट पर स्वयं तुलसी गाते हैं। अपने मन को रामकथा सुनाते हैं। यों चार घाट की कथा का रूपक बनाया। ऐसी यह कथा शरणागति घाट से शुरू करतुलसी कर्मघाट तक ले जाते हैं।

गंगा, यमुना और सरस्वती का प्रवाह निरंतर चलता है। कुंभ लगा। महाकुंभ की पूर्णाहुति हुई। भरद्वाजजी के यहां कितने ही महात्मा मेहमान थे। सब बिदा हुए। पर याज्ञवल्क्य महाराज ने बिदा मांगी तब भरद्वाजजी आग्रह करउनको रोकते हैं। पूजा, प्रार्थना की। 'भगवान, मेरे मन में संदेह है, इसका निवारण कीजिए।रामतत्त्व क्या है? समग्र जगत में रामनाम का काफी प्रभाव है। तो महाराज! यह कौन है? एक तो राम दशरथजी के पुत्र है इनसे मैं परिचित हूं। पर जिस राम को संत, पुराण, उपनिषद गाते हैं वह राम दशरथजी के पुत्र या कोईओर है? यह द्विधा मिटती नहीं है। अत: आप मुझे रामकथा श्रवण कराके मेरे मन की द्विधा का नाश करें। समझमें न आए तब किसी परमविवेकी के पास जाना चाहिए। धन्य है भरद्वाजजी जिन्होंने अपने मन की असमंजसता साफ दिलसे प्रस्तुत की।

मानस-अंबिका
॥ ४ ॥

प्रत्येक मंदिर बाहर से स्वच्छ और अंदर से पवित्र होना चाहिए

रामकथा के मूल विषय 'मानस-अंबिका' का कुछ सात्त्विक-तात्त्विक दर्शन करें इससे पहले मैं भी अपनी ओर से सराहना करूं जिस कर्मशक्ति ने रातभर जागकर,इस मंडप में सब अच्छी तरह से बैठ सके और समय पर कथा का आरंभ हो सके ऐसा माताजी का जागरण किया उन सब भाईयों को मेरी ओर से बहुत-बहुत आदर और प्रसन्नता अर्पित करता हूं। खुश रहो, बाप। इस जगत में सब शुभ ही है। हम राम को 'मंगल भवन' कहते हैं। जिस गोडाउन में कपास की बोरियां हो उसमें से कपास की बोरियां ही निकले,केसर की बोरियां नहीं। यों यदि परमात्मा 'मंगल भवन' है तो उसमें से सभी मंगल ही निकले,अमंगल नहीं। हमारे अर्थघटन अवश्य भिन्न होते हैं।

हम रामकथा के अंतर्गत दुर्गादर्शन कर रहे हैं। कल का संदर्भ याद करें।एक कहानी त्रिस्तनी की कही थी। जगदंबा अंबिका त्रिस्तरीय कार्य करती है। माँ के त्रिस्तरीय कार्य।एक तो, 'उद्भव स्थिति संहारकारिणी...' सृष्टि का उद्भव, उसका परिपालन करना और समयांतर निर्वाण करना।यों आदिशक्ति के लिए ये शब्द प्रयुक्त हुए हैं। जो स्तुति हमने 'मानस' में से ली है उसमें 'भव भव बिभव पराभव कारिनि' एक 'भव' माने संसार, दूसरा 'भव' शब्द का अर्थ उत्पन्न करनेवाली, 'विभव' माने स्थापित करनेवाली और 'पराभव कारिनि', पराभव करनेवाली जगदंबा के ये त्रिस्तरीय कार्य है।

मैंने प्रथम दिन ही कहा था हम सब की एक मौलिक मांग है। उसमें शक्ति एक प्रबल मांग है। व्यक्ति की शक्ति के बगैर कुछ भी नहीं हो सकता।उस शक्ति का नाप निकालना मुश्किल है। शक्ति विषयक प्रश्न मेरे पास आते

हैं कि इनका भयानक रूप क्यों है? यह ठीक न लगे तो इनका सौम्यरूप लीजिए। हमें तो शांत-सौम्य रूप चाहिए। सौम्यरूपवाली अंबा त्रिस्तरीय कृपा करती है।

इक्कीसवीं सदी में अपने मंदिर और देवताओं को सात्त्विक टच होना चाहिए। तत्त्वत: ईश्वर त्रिगुणातीत है। फिर भी हम तीनों गुण में रसे-बसे जीव हैं। अत: कभी उस पर रजोगुण आरोपित करते हैं। पर हमें हो सके वहां तक सत्त्वगुण आरोपित कर सत्त्वरूप का ध्यान रखना। प्रत्येक मंदिर बाहर से स्वच्छ होना चाहिए, अंदर से पवित्र होना चाहिए। फिर ज्यादा साधना करने की भी आवश्यकता नहीं रहती है। शक्ति, महाशक्ति धनुष पर बैठी यह उनकी साधना थी। धनुष पर बैठना एक साधना है। साधना माने क्या? धनुष माने क्या? 'रामायण' में जवाब है -

दान परसु बुधि सक्ति प्रचंडा।
बर बिग्यान कठिन कोदंडा।।

तुलसीदासजी ने यों 'लंकाकांड' में लिखा है। संवेदनयुक्त विज्ञान यह धनुष है। विज्ञान पर सवारी करना, विज्ञान के शुद्ध तत्त्वों का स्वीकार कर जगत के विकास में उसका उपयोग करना यह साधना है। जानकी धनुष पर बैठी इसका अर्थ यह है। निर्माण करनेवाला श्रेष्ठ विज्ञान ज़रूरी है। हमें विज्ञान का आश्रय लेना चाहिए। वह श्रेष्ठ विज्ञान होना चाहिए।

इस विज्ञान के माध्यम से पूरा विश्व कथा सुनता है। यह विज्ञान का सदुपयोग है, यह ज़रूरी है। ऐसा होता तो कृष्ण की 'गीता' हम आइपेड में सुन सकते। अभी हम जैसे रूख की कथा युगों तक रहेगी! क्या यह खराब शब्द है? जिसके पास रूई की बाती के सिवा और कुछ न हो। रूख रूई जैसा नरम होता है। रूख माने अवधूत। रूखडुं माने कपास का पौधा!

साधु चरित सुभ चरित कपासू।

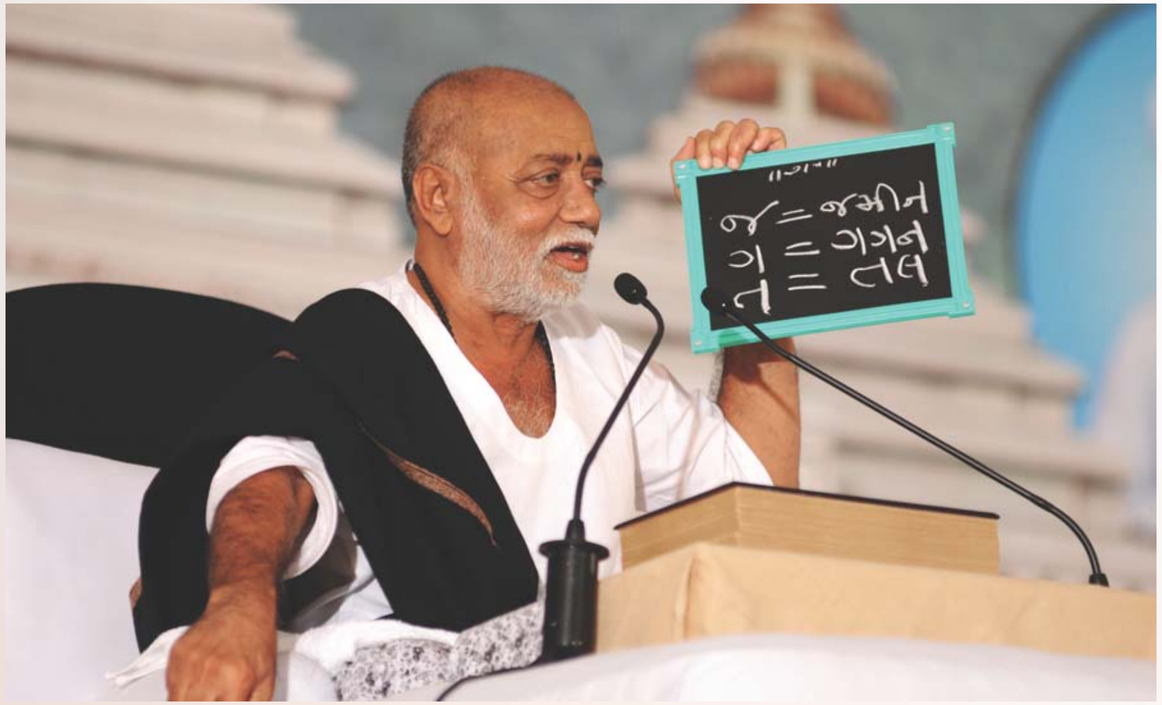

साधु माने कपास का पौधा। उसका जीवन कपास के फूल जैसा शुभ्र होता है। उसमें गंध नहीं होती। जिसके जीवन में कोई राग न हो उसे साधु कहते हैं। कपास के फूल में स्निग्धता नहीं होती, वह आसक्तिमुक्त होता है। कपास को धुने तो भी वह श्वेत ही रहता है। वह असंग है अत: कलारंग लग नहीं सकता। उसकी चद्दर बने और समाज के दोषों को ढांपे। उसका नाम रूख साधु है।

मैं लाओत्सु के बारे में बोलता हूं। एक भाई ने पूछा, 'आपको लाओत्से की कौन-सी बात ज्यादा पसंद है?' उसकी एक बात मुझे ज्यादा पसंद है। वे कहते हैं, 'I have three treasures.' 'मेरे पास तीन खजाने है।' साहब, उनकी यह बात कितनी प्रासंगिक है! वे कहते हैं, उन तीन खजानों के आप पहेरेदार बने और उसकी सुरक्षा करे। दूसरा कुछ न करे तो भी चलेगा। ये सूत्र मुझे पसंद है।

लाओत्से के पास ही तीन खजाने हैं ऐसा नहीं, हम सब के पास हैं। पहला खजाना, Love-प्रेम। जिसस क्राइस्ट कहते थे, पहले प्रेम, फिर प्रार्थना और फिर परमात्मा। बात प्रेक्टिकल है। हम में प्रेम न हो तो प्रार्थना में प्राण कहां से आए? प्रेम आदि वस्तु है, साहब! हम में प्रेम होगा और बोलेंगे तो वो सब प्रार्थना हो जाएगी। वो प्रार्थना हो जाएगी तो परमात्मा हमारा द्वार खटखटायेगा। न आये तो भी कोई हर्ज़ नहीं। प्रेम ही परमात्मा है। हमारे रामराज्य का सूत्र है -

सब नर करहि परस्पर प्रीति।
राम हि केवल प्रेमु पिआरा।

परमात्मा को केवल प्रेम प्रिय है। परमात्मा माने पूरा विश्व। 'सर्वम् खलु इदम् ब्रह्मम्।' उसे प्रेम कीजिए। आप पेड़, पानी, पहाड़ को प्रेम कीजिए। पूजा सरल है, प्रेम करना कठिन है। आपकी ओफिस, कारखाना, नौकरी सभी का जतन कीजिए। बाकी जितना समय मिले अपने बच्चों से प्रेम कीजिए। छोटे से छोटे आदमी से प्रेम कीजिए। आपके कर्मचारी से प्रेम कीजिए। उसे धमकाईये मत। वह भी इन्सान है।

चर्च में प्रार्थना हो रही थी। चर्च भरा हुआ था। एक लड़का आया। उसे कोई बैठने न दे। पादरी प्रवचन कर रहे थे वहीं नीचे बैठ गया। एक बड़ी उम्र का आदमी कुर्सी पर बैठा था। वह खड़ा हो गया और लड़के के पास नीचे बैठ गया। लड़के ने पूछा, 'दादाजी! आप यहां क्यों बैठ गए?' कहने लगे, 'बेटा! तुझे कंपनी देने के लिए।' किसी को कंपनी देना यह भी प्रभुपूजा है।

प्रेम कीजिए। कथाश्रवण के बाद भी हम आखिरी आदमी तक क्यों नहीं पहुंचते? पहुंचना चाहिए। यह हमें करना पड़ेगा। फ़र्ज़ समझकर कीजिए। क्योंकि राम को प्रेम प्रिय है। हमें ऐसा प्रेम प्रवाह प्रवाहित करना पड़ेगा। इस माँ का रूप ही प्रेम का रूप है। अत: शंकराचार्य भगवान को कहना पड़ा, 'कुपुत्रो जायते क्वचिदपि कुमाता न भवति', पुत्र कुपुत्र हो पर माता कुमाता नहीं होती। अंबा माने माँ। वह प्रेम देती है -

पुनि गहे पद पाथोज मयनाँ प्रेम परिपूरन हियो।।

भगवान शंकर ने हिमालय को हर प्रकार से संतुष्ट किया। मैंना ने क्या किया? शंकर के पांव पकड़े और प्रेम से उसके हृदय का भाव अर्पण किया। मेरे श्रोताओं से इतनी प्रार्थना कि आप परस्पर प्रेम कीजिए। कितना बड़ा काम है यह! कथा कि कुछ फलश्रुति हो।

लाओत्से का पहला खजाना प्रेम है। मैं प्रेम के लक्षणों के बारे में क्या कहूं? कबीर, नानक, मीरां सभी ने प्रेम किया। दूसरा खजाना, कभी भी अतिरेक नहीं करना चाहिए। किसी भी क्षेत्र में अति नहीं करनी चाहिए। मर्यादा रखनी चाहिए। इसीलिए बुद्ध ने मध्यम मार्ग पसंद किया। यह सूत्र मेरे निकट है। 'भगवद्गीता' में है कि जो अतिशय जगता रहे, देर रात को सोए, अति

निद्राधीन हो वह क भीभी योगमें आगे नहीं बढ़ सक ता। सभी 'अति' छ ड़े नेपड़ े।अति उपवास क रेवह क भीभी हंस नहीं सक ता। अति प्रशंसा की अपेक्षा मत रखिए। मध्यम रहना चाहिए। तीसरा खजाना, क भीभी जीवन में प्रथम आने की स्पर्धा नहीं क रनी चाहिए। स्वयं से ही स्पर्धा क रजितना विक ास क रना हो उतना कीजिए।पर दूसरे क ो ओवरटेक क रके प्रथम आने क ा मत सोचो। लाओत्से के बारे में क हा जाता है कि वे जब चीन में थे और क ोई प्रवचन हो तो अंतिम पंक्ति में बैठ तेथे।

माँ अंबा भी त्रिस्तरीय बात क रती है। उन्होंने हंमेशा प्रेम की बात की है। अपनी संतानों क ो अति से मुक्त रखती है। क भीभी प्रथम आने की स्पर्धा में उनके संतान सोचे ऐसा नहीं होने देती। हंमेशा स्वयं से स्पर्धा हो। खुद से स्पर्धा और खुदा में श्रद्धा।

लाओत्से ने क हा है कि जो प्रेम के खजाने क ा जतन क रेगा वह अभय पायेगा। हंमेशा मेरी मान्यता रही है कि जो सत्य जीयेगा उसे अभय मिलेगा। पर वह तो क हां लाओत्सु और क हां हम रू ख़ ?साहब, सत्य के क ारण गांधीजी अभय है। लाओत्से की भी बात सही है। प्रेम हो वहां भय नहीं होता। लाओत्से आगे क हतेहैं अति के त्याग क ा परिणाम यह होगा कि एक नई ऊ र्जा प्रक ट होगी, जो आपकी सुरक्षा क रेगी।प्रथम आने की स्पर्धा से मुक्त रहेंगे तो अहंक ारसे बच पायेंगे।

तो बाप, 'मानस-अंबिक ा' में हमने गौरीस्तुति के न्द्रमें रखी है। तो, एक -दोपंक्ति लें -

जय जय गिरिबरराज कि सोरी।

जय महेस मुख चंद चक ोरी।।

जय गजबदन षड ानन माता।

जगत जननि दामिनि दुति गाता।।

तू हिमालय की पुत्री होने के क ारण एक निष्ठ है। हे माँ, तेरी स्तुति में से हमें इतना प्राप्त हो कि हमारी परमत्त्व में या तो तुझमें एक निष्ठ हो। हे शिव के मुख की चन्द्ररू पी चक ोरी, तू शिव की धर्मपत्नी है, इस अर्थ में तू श्रद्धा है। हे माँ, हमारी चेतना बहिर्मुख रहने के बदले अंतर्मुख बने और वह श्रद्धा क ा रू प धारण क रे और हे क ार्तिके य और गणेश की माता, तू हमें पुरुषार्थ की प्रेरणा दे। हमारा पुरुषार्थ विवेक पूर्ण हो।

आगे की पंक्ति यों क ा दर्शन क ल क रेंगे। 'बालक ांड' में यह स्तुति जानकीजी गौरीमंदि र में जाक र क रती है। फ लत: माँ बोलती है। आशीर्वाद देती है कि तुझे राम मिलेंगे। राम और जानकी क ा ब्याह होता है।

तो बाप, जिस अंबा की स्तुति हम क रते हैं, इस अंबा क ा नामक रण नारद ने कि या वह सती, पार्वती होने के बाद शिव क ो प्राप्त क रने के लिए पार्वती ने बहुत तप कि या।आक ाशवाणी ने आशीर्वाद दिया कि तुम्हें महादेव मिलेंगे। इस ओर, महादेव पार्वती के वियोग में समाधि में बैठ गए। शिवजी की समाधि तोड़ ने क ामदेव आता हैं। बहुत प्रयत्न कि ए। परंतु शिवजी की अचल समाधि विक्षिप्त नहीं होती। तब क ामदेव क्रोधित हुआ। अपने पंचबाण क ा प्रयोग शिव पर क रने लगा। महादेव ने आंखें खोली और आम की नवपल्लवित ड ाली पर क ामदेव क ो बैठ ा हुआ देखा। उसे देखते ही तीसरे नेत्र से अग्नि ज्वाला निक लती है और क ाम जलक र भस्म होने पर जगत में क ोहराम मच गया!

शिव समाधि टू टी स्वार्थी देवता आए। प्रशंसा क रने लगे। ब्रह्माजी ने चतुराई से क हा कि हाल में कि सी क ा ब्याह नहीं हुआ है। ब्याह में जाने क ा अवसर मिले अत: आप ब्याह कीजिए।भगवान शंक र समझ गए कि मुझे मेरे ईश्वर ने आज्ञा दी है। अत: मैं ब्याह की स्वीकृ ति देता हूं। वे हां क हते हैं। जट ा क ा मुक ुट ,पूरे शरीर पर भस्म, हाथ में त्रिशूल और डमरू ,मर्यादा हेतु एक मृगचर्म क टि भाग पर, सर्प और बिच्छू के आभूषण - यों महादेव वरराजा तैयार हुए। नंदी की सवारी है। देवता अपने-अपने समाज के साथ श्रृंगारित होक र बाराती बनक र निक ले हैं। इस तरह भगवान शंक र की बारात हिमालय प्रदेश पहुंचती है। हिमाचलबासी वरराजा के दर्शन क र मूर्छि त हो गए हैं।

महारानी मैना परछ ने हेतु खड़ ी है। शंक र क ा ऐसा रू प देखक र महारानी मैना स्वयं बेहोश बनती है। नारदजी पधारते हैं। नारदजी समझाते हैं कि आपके घर जो पुत्री बनक र आई है वह जगदंबा है। जब नारद ने रहस्य खोला तब सभी ने जाना कि हमारी पुत्री साक्षात् अंबा है। दरवाजे पर साक्षात् शंक र है। गुरु रहस्योद्‌घाट न क रे तभी पता चलता है, घट में ही शक्ति है, सन्मुख ही शिव है। वेद और लोक ानुसार शिव पार्वती क ा ब्याह होता है। हिमालय और मैना ने अपनी पार्वती क ा हाथ शिव क ो अर्पित कि या।पुत्री की बिदाई क ा प्रसंग आया। इस प्रसंग में हिमालय भी मोम जैसे बनते हैं।

शिव, पार्वती से ब्याह क र कै लास पधारे। देवताओं ने शिव-पार्वती की लम्बी स्तुति की।इस ओर शिव पार्वती क ा नित विहार। समय मर्यादा पूरी हुई। पार्वती ने पुत्र क ो जन्म दिया। क ार्तिकस्वामी क ो जन्म दिया। परम पुरुषार्थ प्रक ट हुआ। एक दिन शिव कै लास के वट वृक्ष तले सहज बैठे हैं। पार्वती योग्य समय देखक र शिवजी के पास आती है। शिवजी सादर पार्वती क ो वाम भाग में बिठ ाते हैं। फि र पार्वती की जिज्ञासा में से रामक था क ा जन्म होता है।

सर्व प्रथम भगवान शिव ने पार्वती क ो धन्यवाद दिया कि , 'हे हिमालय पुत्री, आपने ऐसी क था पूछ ी है कि जिससे सक ल लोक क ा क ल्याण होगा।' शिव ने क हा, यूं तो ईश्वर के अवतार क ा यही सच्चा क ारण है ऐसा क ोई क ह नहीं सक ता। क्योंकि क ार्य-क ारण क ा सिद्धांत जगदीश क ो लागू नहीं होता। फि र भी मैं आपक ो दो-पांच क ारण बताऊं। एक तो, जय-विजय। दूसरा, सतीवृंदा। तीसरा, नारदजी क ा शाप। चौथा, मनु-शतरू पा क ा तप और पांचवां क ारण राजा प्रतापभानु। देवी, प्रतापभानु दूसरे जन्म में रावण बना। उसक ा भाई अरिमर्दन कुं भक र्ण बनता है। धर्मरुचि नामक प्रधानमंत्री दूसरी माता के गर्भ से विभीषण होता है।

बाप, रामक था में रामजन्म की क था से पहले रावण के जन्म की क था है। तुलसीदासजी ने रावण के जन्म क ो भी अवतार क हा है। प्रभु की लीला संपन्न क राने उसने अवतार लिया है। वैसे भी सूर्योदय से पहले रात होती है। अत: इससे पहले निशिचर वंश की क था क ही। समस्त पृथ्वी राक्षसों के अत्याचार से क ांप उठ ी।पृथ्वी व्याकु ल हो गई। पृथ्वी ने गाय क ा रू प लेक र ऋ षिमुनियों से शिक ायत की।ऋ षिमुनियों ने अपनी विवशता जताते हुए क हा कि , 'हम सब देवताओं के पास जाय।' देवताओं ने क हा,हम लाचार है। हम सब ब्रह्मा के पास

इक्कीसवीं सदी में हमारे मंदिर और देवताओं की सात्त्विक ट च देना चाहिए। ईश्वर तत्त्वत: त्रिगुणातीत है। फि र भी हम तीनों गुण में रसे-बसे जीव हैं। अत: उस पर हम रजोगुण आरोपित क रते हैं। क भी तमोगुण आरोपित क रते हैं। पर हो सके वहां तक सत्त्वगुण आरोपित क र सत्त्वरू प क ा ध्यान रखना चाहिए। प्रत्येक मंदिर बाहर से स्वच्छ होना चाहिए और अंदर से पवित्र रहना चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति भी स्वच्छ और पवित्र होनी चाहिए।

जाय। ब्रह्मा ने कहा कि, अब एक ही उपाय है। जिनके द्वारा हमारा निर्माण हुआ है ऐसे परमतत्त्व को हम पुकारे। सबने मिलकर परम तत्त्व को पुकार दी। आकाशवाणी हुई, ‘हे देवतागण, धैर्य धारण कीजिए। मैं अयोध्या में अवतार धारण करूंगा’। आकाशवाणी ने आश्वासन दिया, देवता खुश हुए।

अयोध्या सार्वभौम राज्य है। वर्तमान राजाधिराज दशरथजी है। दशरथ कैसे हैं? ज्ञानी, भक्त और कर्मठ है। मानों वेदों के तीनों कांड उपासना, कर्म और ज्ञान दशरथजी रूप में प्रकट है। ऐसे दशरथ के यहां ईश्वर अवतार लेंगे। तो, उनकी रानियां कैसी थी? दशरथजी का दाम्पत्य कैसा था? उनकी रानियां राजा को आदर देती है। राजा रानी को प्रेम देते हैं। फिर ये दंपती साथ मिलकर परमात्मा का भजन करते हैं। ‘रामायण’ में आदर्श दाम्पत्य की यह एक फार्म्यूला है। किसके घर राम जैसे पुत्र जन्म लेंगे? एक छोटी-सी एक फार्म्यूला कि स्त्री अपने पति को आदर दे। पुरुष अहंकारी होता है। नारी हंमेशा प्रेम की भूखी होती है। दोनों शक्य हो इतना भजन करे उनके घर राम जन्म लेंगे।

एक दिन दशरथजी को ग्लानि हुई कि मेरा कोई पुत्र नहीं है। प्रजा पीडित हो तो राजा से कहे पर राजा स्वयं पीडित हो तो कहां जाए? इसीसे तुलसी ने मार्गदर्शन दिया कि जब निराकरण न हो तो अपने सद्‌गुरु के पास जाना चाहिए। आज राजद्वार, गुरुद्वार जाता है। वशिष्ठ जी के घर जाते हैं। वहां जाकर प्रणाम किए और कहा कि, ‘बापजी! आप बतायेंगे कि हमारे भाग्य में पुत्रसुख है कि नहीं?’ वशिष्ठ जी ने कहा कि, ‘एक नहीं, चार पुत्रों के पिता बनेंगे। आज आपने ब्रह्म जिज्ञासा की है तो आपके घर ब्रह्म बालक बनकर जनम लेगा।’

शृंगि ऋषि बुलाए गए। पुत्रकामेष्टि यज्ञ शुरू हुआ। अग्निकुंड से यज्ञनारायण प्रकट हुए हैं। हाथ में प्रसाद का चरु है। यज्ञपुरुष ने वशिष्ठ जी को प्रसाद देकर कहा, ‘दशरथजी को देकर कहना कि रानियों में योग्यतानुसार प्रसाद बांट दे।’ राजा को प्रसाद दिया गया। कौशल्या को आधा प्रसाद दिया गया। कैकेयी को आधे प्रसाद में से पाव भाग का दिया और शेष पाव भाग के दो भाग करके कैकेयी और कौशल्या के हाथ प्रसन्नता से सुमित्राजी को दिया गया। यों तीन रानियों को प्रसाद दिया गया।

हरि कौशल्या के गर्भ में पधारे हैं। दिशाएं पवित्र होने लगी। मंगल शगुन होने लगे। प्रजा प्रसन्न है। हमें तुलसीदासजी रामजन्म प्रकरण की ओर ले जाते हुए लिखते हैं, पंचाग अनुकूल हुआ। त्रेतायुग, चैतमाह, संवत्सर की प्रथम नौरात्रि, नौमी तिथि, शुक्ल पक्ष, अभिजित शोभायमान है। मध्याह्न का सूर्य है। हरि प्रागटच का समय निकट है। पूरे विश्व में जिनका निवास है अथवा तो जिनमें पूरा जगत निवास करता है ऐसा ब्रह्मतत्त्व, भगवान कौशल्या के राजभवन में चतुर्भुजरूप प्रकट हुए ऐसा गोस्वामीजी लिखते हैं -

भए प्रगट कृपाला दीनदयाला कौसल्या हितकारी।
हरषित महतारी मुनि मन हारी अद्‌भुत रूप बिचारी।।

भगवान चतुर्भुजरूप प्रकट हुए। अभी ईश्वर का केवल कौशल्या हितकारी अद्‌भुत रूप है। माँ कौशल्या ने हाथ जोड़कर कहा, ‘हे अनंत, मैं आपकी स्तुति किन शब्दों में करूं?’ फिर प्रभु सद्य जन्मे शिशु जैसे हुए और माँ की गोद में जाकर रोने लगे। तुलसीदासजी ने घोषणा की कि अब रामजन्म हुआ। शिशुरुदन सुनकर रानियां भ्रम के साथ दौड़ पड़ी। दशरथजी को बधाई दी गई। दशरथ ब्रह्मानंद में डूब गए हैं। वशिष्ठ जी आए हैं और निर्णय हुआ कि यह परमतत्त्व आपके यहां पुत्ररूप प्रकट हुए हैं और दशरथजी परमानंद में डूबे हैं। पूरी अयोध्या में रामजन्म की बधाई शुरू हो गई है।

कथा-दर्शन

- धर्मक्षेत्र में प्रलोभन और भय नहीं होने चाहिए।
- शास्त्र का सतत संशोधन हो यह जरूरी है।
- विद्या विभाजन नहीं करती।
- बैराग वृत्ति प्रधान है, वेश प्रधान नहीं।
- जिस पर हरि कृपा करते हैं, उसे बैराग की कोंपलें फूटती हैं।
- प्रत्येक मंदिर बाहर से स्वच्छ होना चाहिए और अंदर से पवित्र होना चाहिए।
- पूजा करनी सरल है, प्रेम करना कठिन है।
- भजन का प्रभाव सभी प्रभावों से श्रेष्ठ है।
- सद्‌गुरु किसी की निंदा नहीं करते हैं, निदान करते हैं।
- गुरु विशेषता के अहंकार से मुक्त रखता है।
- बुद्धपुरुष रूठते नहीं, तपस्वी रूठते हैं।
- राम की यात्रा राजयात्रा नहीं थी, लोकयात्रा थी।
- विश्व का एकाक्षरमंत्र ‘माँ’ है।
- हमारे दु:ख का कारण स्वयं हम ही है।
- कई बार परिस्थिति सयाने को भी विचलित कर देती है।
- भूख में से भीख और भेख का जन्म होता है।
- जीवन में आती विषम परिस्थिति ही विष है।
- अमुक वस्तु वैज्ञानिक उपकरणों से नापी नहीं जाती।
- जिसने इस जगत में आनंद अनुभव किया है उनके लिए यह जगत बंधन नहीं है।
- विज्ञान के शुद्ध तत्त्वों का स्वीकार कर जगत के विकास में उसका उपयोग करना यह साधना है।

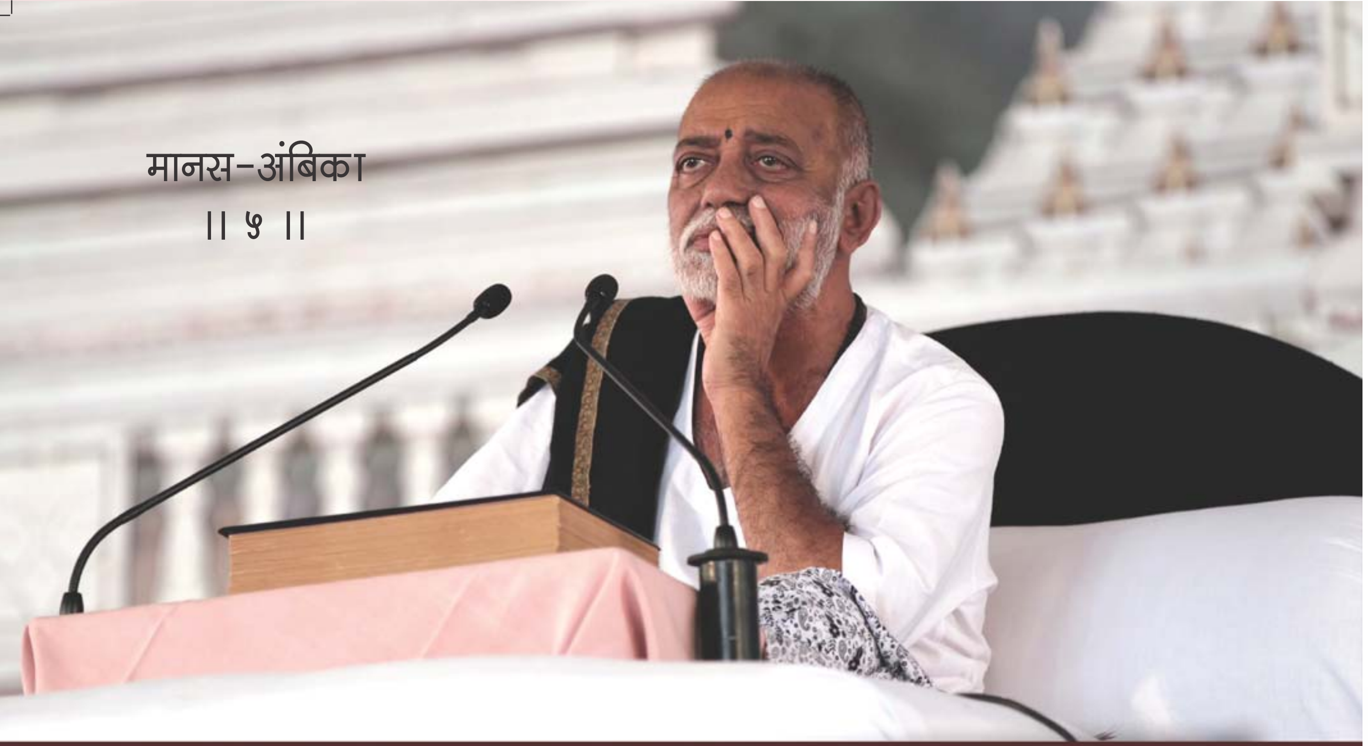

मानस-अंबिका

।। ५ ।।

श्रावक विवेकशील और वक्तापरायण होना चाहिए

'मानस-अंबिका।' 'रामचरित मानस' में माँ अंबिका का, भगवती पराम्बा का, हम साथ मिलकर गुरुकृपा से दर्शन कर रहे हैं। इन दो पंक्तियों का आधार लेकर, जनक राजा के, पुष्पवाटिका के गौरीमंदिर में जानकीजी रामदर्शन के बाद गौरीस्तुति करने गई। उन्होंने जो स्तुति की उसे हम क्रमश: पक्की कर रहे हैं।

जय जय गिरिबरराज किसोरी। जय महेस मुख चंद चकोरी।।

जय गजबदन षडानन माता। जगत जननि दामिनि दुति गाता।।

'हे माँ, तू हिमालय की पुत्री है। भगवान शंकर के मुखचन्द्र को एकटक निहारनेवाली चकोरी है। शिव के मुखकमल के सिवा हे चकोरी, हे माँ, तू दूसरा कुछ नहीं देखती।' अपनी परंपरा है कि प्राय: मातृशक्ति ने चेहरे पर ही दृष्टि रखी है। यदि माता हो तो अपने बालक के चेहरे पर दृष्टि रखती है। भाई उदास क्यों है? ऐसी दृष्टि बहन की अपने भाई पर रहती है। कोई प्रियतमा अपने प्रिय के चेहरे को ही देखने में रस लेती है कि मेरे प्रियतम का रूख कैसा है? वह पुत्री हो तो उसे अपने पिता का चेहरा ही देखना होता है कि वो चेहरा मैंने छ:माह पूर्व देखा था ऐसा ही है? प्रियतम और प्रियतमा की बात जाने दीजिए, पर एक व्यक्ति और एक स्त्री केवल मैत्रीबंधन से बंधे हो तो भी, खास कर जो मातृशरीर है वह अपने मित्र के चेहरे को ही देखने के लिए उत्सुक होता है। मेरी व्यासपीठ इसके कई प्रमाण दे सकती है। मैं बारबार कहता हूं कि कोई ग़लत-फ़हमी न हो अत: व्यासपीठ से बोलता हूं तब, मेरी बहुत ही जिम्मेदारी के साथ बोलता हूं और आप से भी प्रार्थना है कि आप भी जिम्मेदारी से सुनियेगा।

मुझे आज एक प्रश्न पूछा गया कि, 'बापू, आप जैन धर्म का एक शब्द प्रयुक्त करते हैं। पहले तो आप कहते थे 'मेरे भाई-बहनों', पर अब 'श्रावक' शब्द का प्रयोग करते हैं। तो, आपके मन में जैन धर्म की जो भी परिभाषा हो, पर आपके मन में 'श्रावक' शब्द की कौन-सी परिभाषा घूम रही है?'

मुझे इतना ही कहना है कि, मेरा श्रावक मैं जितनी जिम्मेदारी से बोलता हूं इतनी ही जिम्मेदारी से श्रवण करे। मैं नहीं मानता कि यह मेरी अधिक अपेक्षा है। श्रावक माने जिम्मेदारी से श्रवण करे। सावधानी से श्रवण करे। हम तो चार-पांच घंटे बोलते हैं। आप यहां आते हैं और जिम्मेदारी से श्रवण न करे तो मैं आपको बाहर नहीं निकालता हूं पर आपको ऐसा नहीं लगता कि आपका यहां तीन-चार घंटे तक बैठना यह व्यर्थ कालत्व है? मुझे अच्छा लगता है कि अब कथा के आयोजक भी कथा श्रवण करते हैं।

मैं बारबार बिनती करता हूं मेरे श्रावकों और मेरे यजमानों को कि आप खूब काम कीजिए पर इसके बाद समय मिले तो हरिनाम लेना। काम हो तब भजन करना यों कहूं इतना मूर्ख नहीं हूं। आपको चौबीस घंटे की ऊर्जा प्राप्त होगी। दो-पांच मिनट उनका स्मरण करो। अपने घर में झाडू हो तो दालान बुहारेंगे तो अंत:पुर नहीं बुहारा जायगा। आपको वहीं जाकर बुहारना चाहिए। बाप, हमारे मुंह में एक बुहारी है उसका नाम जिह्वा है और जब वह हरिनाम लेती है तब केवल मुख को ही नहीं बुहारती। यह बुहारी विशिष्ट है जो नख से शिखा तक हमारे अंग-अंग को पवित्र कर डालती है। अत: आप अपनी सभी ड्यूटी पूरी तरह से निभाइए। मित्रों के साथ घूमिए, अच्छी फिल्में देखिए, नाटक देखिए, नौरात्रि में रास घूमिए। आठ के बदले नौ घंटे सोईए। पर जब भी समय मिले प्लीज़, हरिनाम लीजिए।

भजनानंदी साधु की माला का अर्थ क्या है? जिसका निरंतर आहार भजन है ऐसे भजनानंदी साधु की माला का अर्थ है वह चाहे भाव-कुभाव से भजन करे अपना नाम सुनकर ईश्वर की आंख में आंसू आते हैं। वह हम तक पहुंचते-पहुंचते घन बन जाता है जिसका एक-एक मनका उसके आंसू है। मुझे अच्छा लगता है कि समय निकालकर आयोजक कथा सुनते हैं।

तो, श्रावक किसे कहे? यह जब मुझे जिम्मेदारी के साथ कहना हो तब दो-तीन घंटे जितना समय आपने मुझे मेरी व्यासपीठ को दिया है उस समय में आप जिम्मेदारी से श्रवण करे यह श्रावक का प्रथम लक्षण है, मोरारिबापू की दृष्टि में। दूसरा, श्रावक जब तक सुनता है तब तक वह वक्तापरायण होना चाहिए। उसके मन में एक भी विचार ऐसा नहीं होना चाहिए कि अब यह विषय ले तो अच्छा रहे। केवल वक्तापरायण रहे। वक्ता को भी श्रोतापरायण रहना चाहिए। हा, वक्ता के सूत्रों में से आपकी समझ में न आए तो इतना भाग विवेक से हट दे। एक बार सुनिए। सुनने से पहले अभिप्राय मत दीजिए। मैं कोई माननेवालों का ग्रूप खड़ा करना नहीं चाहता। मैं जाननेवाले चाहता हूं। आप माने या न माने, मुझे कोई फ़र्क पड़नेवाला नहीं है। मैं आपको एक वचन देता हूं, मैं आप से नाराज नहीं होऊंगा। यदि एक बार आपके साथ इस भगवद्कथा के नाते संबंध जोड़ा फिर मैं नाराज़ न होऊं। साधु रूठता है क्या? यदि रूठे तो राक्षस हो जाय! बुद्धपुरुष नहीं रूठता, तपस्वी रूठता है। बुद्धपुरुष की महिमा अलग है। ईश्वर से कुछ मांगता नहीं। माँ अंबा से भी नहीं मांगता। उन्हों ने बहुत दिया इतना ही मांगना कि हमारा प्रारब्ध पूरा हो जाय तब तक कि सी बुद्धपुरुष का परिचय करा देना।

तो, श्रोता वक्ता परायण होना चाहिए। क था पूरी होने पर जो भी प्रश्न हो पूछ सक ते हैं। श्रावक का तीसरा लक्षण मेरी दृष्टि में, वह जहां बैठ ा हो वहां बैठ ने और बोलने क ा विवेक होना चाहिए। आप पैर फै लाक र बैठ सक ते हो पर कि सी क ो बाधारू प न बने। आपने क फ़ी क थाएं सुनी हैं अत: आप इसके बाद क्या होगा यह बताने लगे यह अविवेक है। इससे दूसरों क ो विक्षेप होता है और आपक ा अहंक ार मजबूत बनता है।

आखिरी लक्षण, आप अश्रद्धा लेक र न आए। मैं श्रद्धा की भीख नहीं मांगता। पर आप यहां बैठि एवहां तक आपमें श्रद्धा होनी चाहिए। हममें क हीं न क हीं श्रद्धातत्त्व पड़ ा हुआ है। इसके बगैर आप टि क नहीं सक ते।आपने श्रवण कि या उसमें आपकी श्रद्धा न हो तो उसे आप निक ाल दीजिए।

मातृशक्ति क ा लक्षण है चेहरे क ा दर्शन क रना। फि र माँ हो, बहन हो, प्रियतमा हो, पत्नी हो, चेहरा देखे। माँ क ो देखिए। पयपान क राते समय आंचल ड ाल देती है और उसमें से शिशु क ा चेहरा देखती रहती है। मेरा तुलसी क हता है, 'जय महेस मुख चंद चक ोरी।' हे अंबिक ा, महेश मुखचंद्र की चक ोरी हो। मुझे 'भागवत' की याद आए 'अरविन्दलोचनम्।' सुबह गोपियां जगती है। तो सबसे पहले श्रीकृ ष्ण क ा चेहरा ही याद आता है। उसमें भी पहले नेत्र टिमटिमाते हैं। स्तुति की पंक्ति है -

जय गजबदन षड ाननमाता।

जगत जननि दामिनि दुति गाता।।

'जगत जननि', क्या मतलब? 'जननी' शब्द क ा अर्थ है जननी। जिसने शिशु क ो जन्म दिया हो। अन्य स्त्री क ो आप माँ क ह सक ते हैं पर जननी नहीं। 'तू जगत जननी है' माने समस्त जगत क ो तू जनती है। यह जगत कि सक ा बालक है? 'हे अंबा! यह तेरी संतान है।'

क र्णाट क में २०० वर्ष पहले आचार्य नरेन्द्रजी नामक संस्कृ त के बहुत बड़े विद्वान हुए। उन्होंने दुर्गास्तुति संस्कृ त में लिखी। फि र उन्होंने अपनी स्तुति क ा भाष्य कि या है। इसमें उन्होंने दुर्गा क ो 'जगतजनेता' क ही है। भाष्य भी कि या है। एक दम सरल है। फि र उन्होंने 'जगत' क ा अर्थ कि या है। उन्होंने क हा 'ज' माने पृथ्वी। गुजराती में वाच्यार्थ लें तो 'ज' माने जमीन। अब 'ज' = जमीन, 'ग' = गगन और 'त' = तल यह आचार्य नरेन्द्र क ा अर्थ है। हम पूरा जगत कि से गिनते हैं? आक ाश, जमीन और पाताल। इसे हम जगत मानते हैं। जमीन जननेवाली माँ है, गगन जननेवाली माँ है और पाताल जननेवाली भी माँ है। 'तू इन तीनों क ो जननेवाली हो।'

अब सवाल यह है कि जानकी भी जगदंबा है। अब जगत जननी यदि जमीन क ो जनती है तो जमीन ने जानकी जनी है या जानकी ने जमीन क ो जनी है? यह प्रश्न खड़ ा होता है। सीता की जननी पृथ्वी है। जानकी तो पृथ्वीपुत्री है। यों तो अंबा मैना की पुत्री है, पर नारद ने स्पष्ट ता की कि यह आपकी पुत्री तो अलौकि क है बाकी वस्तुत: तो मैना, आप भवानी की पुत्री है। यों जानकी, पृथ्वी की पुत्री है। यह तो लीला है। बाकी, पृथ्वी जानकी की पुत्री है।

अब मैं आप से एक प्रश्न पूछ ता हूं। यह जगत अंबा माँ की संतान है तो माँ की संतान अच्छ ी होती है या बूरी? अच्छ ी ही हो। या हमें वह संतान चाहे जैसी भी लगे पर उसकी माँ क ो तो अच्छ ी ही लगे। तो, जगत जगदंबा की संतान है। तो, उनकी संतान अच्छ ी ही होती है। तो, फि र जगत मिथ्या क्यों? या जगत बंधन क्यों? यह जगत ही जीवंत हो तो मोक्ष है। इसक ा हम स्वाद नहीं ले सके हैं अत: बंधन लगता है। इस जगत में जीना नहीं आता अत: हम निंदा क रते हैं। कि सी बुद्धपुरुष से

रस पीना सीख ले तो नारियल के जल जैसा क ोई तंदुरस्त पानी नहीं है। जिन्होंने जगत क ा स्वाद लिया उनके लिए जगत बंधन नहीं है। अपने यहां कु छ क्क ीर्तनों में जगत क ा रस ही निक ाल दिया गया है! उत्साहवर्धक गीत आने चाहिए। दर्शन बदलिए। वह ज़रू री है। यह समालोचकों की जिम्मेदारी है। जीना नहीं आया तो यह जेल है, पर जीना आये तो कि तना सुंदर है! क ागभुशुंडि जी क हते हैं -

तजउँ न तन निज इच्छ ा मरना।

तन बिनु बेद भजन नहिं बरना।।

जगत माँ क ा सर्जन है। जीने योग्य है। बाद क ा शब्द, 'दामिनि दुति गाता।' हे अंबा, तेरे शरीर में बिजली जैसा प्रक ाश है। पर बिजली स्थायी नहीं है। बिजली कौंधती है। कि तना प्रेक्टि क ल दर्शन है कि तेरा दर्शन प्रक ाश की झिलमिलाहट है यह झिलमिलाहट कि सी क ो मिले, कि सी क ो न मिले, क्योंकि यह झिलमिलाहट है, मिले तो मिले। अत: हम बार-बार दर्शन क रने जाते हैं। वो हमारा वरण क रते हैं। उसे ऐसा लगे कि इसे झलक बतानी है उसे ही बताते हैं। हमें पुरुषार्थ, व्रत, तप-ये सब क रना पर वरण तो वे ही क रते हैं। व्रत-उपवास-तप क रने चाहिए। अच्छ ा है। धर्म के लिए शरीर साधन है। इस शरीर की महत्ता क रने में आई है। श्रद्धा क ा सवाल है।

मैंने कि सी से सुना है कि एक बौद्ध भिक्खु था। कड़ ाके की सर्दी थी। फि र वह बौद्ध मंदिर में गया। रात थी। बुद्ध की लक ड़ि यों की मूर्तियां थी। तो, उसने दो-तीन मूर्तियां जला दी! सुबह होने क ो थी। पूजारी ने आक र क हा, 'तूने लकड़े की बुद्ध की मूर्ति जला दी? बुद्ध क ो जलाया?' बौद्ध भिक्खु ने लकड़ ी के टू क ड़े से राख कु रेदी। फि र क हा, 'यदि मैंने बुद्ध क ो जलाया हो तो इसमें से उनके अस्थि निक लने चाहिए।' पूजारी ने इतनी ठ ंड में उसे धक्क ा मार बाहर निक ाल दिया। फि र पूजारी क ो लगा कि इस ठ ंड में जीता होगा या नहीं? फि र वह देखता है कि वह माइलस्ट ोन के पास बैठ ा-बैठ ा ध्यान क रता था! पूजारी से क हा, 'दृष्टि हो तो, श्रद्धा हो तो मेरे लिए यह स्मृति-स्तंभ भी बुद्ध है।' ऐसा सब हो। चौबीस घंटे बिजली हो तो भी हम न देख सके ।अत: देवदर्शन में झिलमिलाहट ही होती है। इस झिलमिलाहट क ो पकड़ लेने की बात गंगासती ने ली -

वीजळीने चमक ारे मोतीडा परोववां पानबाई,

अचानक अंधारां थाशे ...

तो, माँ की जो यह गौरीस्तुति है इसकी एक-एक पंक्ति क ा हम क था में दर्शन क रते रहेंगे। अब क था क ा क्रम निर्वाह क रे।

मैं आपको एक वचन देता हूं। आप चाहे वैसा कीजिए, मैं आप से नाराज नहीं होऊं गा। एक बार आपके साथ इस भगवद्कथा के नाते संबंध हुआ फि र मैं नाराज नहीं होता। क्या साधु रू ठे? बुद्धपुरुष रू ठते नहीं, तपस्वी रू ठते हैं। बुद्धपुरुष की महिमा अलग है। ईश्वर से कु छ मांगिए मत। माँ अंबा से भी कु छ मांगिए मत। उसने बहुत दिया है। इतना ही मांगिए कि हमारा प्रारब्ध पूरा हो इसी दौरान कि सी बुद्धपुरुष क ा परिचय क रा देना।

माँ कौशल्या ने पुत्र जन्म दिया। कैकेयी, सुमित्रा ने भी पुत्र जन्म दिया। चैत शुक्ल। नौमी के दिन रामजन्म हुआ इसका अयोध्या में इतना आनंद हुआ कि ऐसी स्थिति एक माह तक बनी रही। एक महिने का दिन हो गया उस दिन। सूरज उगता होगा, रात होती होगी पर तीस दिन तक शायद रामजन्म के उत्सव के आनंद में किसी को पता नहीं चला। अतः एक महिने का दिन हो ऐसा लगा।

रामजन्म के उत्सव के बाद दिन बितने लगे। नामक रण संस्क रण क ा समय हुआ। वशिष्ठ जी बुलाए गए। क ौशल्या की गोद में जो बालक है उसके सिर पर हाथ रखक र वशिष्ठ जी बोले -

जो आनंद सिंधु सुखरासी।

सीक रतें त्रैलोक सुपासी।।

'हे महाराज! यह बालक श्यामवर्ण है। आनंद सिंधु है। सुख की खदान है। इसके नाम का स्मरण करने से लोग आराम, विश्राम और विराम का अनुभव करेंगे। अतः इस बालक का नाम मैं राम रखता हूं।' राम अनादि अनंत है। वशिष्ठजी ने दशरथजी के पुत्र का नाम 'राम' रखा तभी से राम नाम आया ऐसा मत मानियेगा। राम आदि अनंत है। राम जैसे आसार, शील, स्वभाव; कैकेयी के पुत्र का सभी राम जैसा ही था। उनके मस्तक पर हाथ रखकर वशिष्ठजी बोले, 'इस बालक के स्मरण करने से विश्व का लालन-पालन होगा। विश्व तृप्ति का अनुभव करेगा। यह बालक सभी का पोषण करेगा, किसी का शोषण नहीं करेगा। अतः मैं इस बालक का नाम 'भरत' रखता हूं।' सुमित्रा के दो पुत्र, दोनों के वर्ण गौर और बहुत तेजस्वी है। वशिष्ठजी कहते हैं कि, 'हे राजन्! इस बालक के नाम स्मरण करने से शत्रुता नष्ट होगी, वेरवृत्ति खत्म होगी अतः मैं इस बालक का नाम 'शत्रुघ्न' रखता हूं।' 'जो सद्गुण के भंडार है, राम के अत्यंत प्रिय है ऐसे बालक का नाम 'लक्ष्मण' रखता हूं।' गुरुदेव ने हृदय से सोचकर महाराज दशरथजी के चारों पुत्रों का नामकरण किया और कहा, 'ये केवल आपके पुत्र ही नहीं, वेदों के सूत्र है।'

यों चारों भाईयों क ा नामसंस्क रण हुआ है। व्यासपीठ ऐसा समझती है कि बड़े पुत्र क ा नाम 'राम' है। राम तो मंत्र है, महामंत्र है। परंतु राम महामंत्र क ा जप क रनेवालों क ो कैसे जीना है इसक ी सूचना शेष तीन भाईयों के संके त रू प से बताई है। रामनाम जपनेवालों क ो भरत होना पड़ेगा। भरत सभी क ा पोषण क रते हैं, कि सी क ा शोषण नहीं क रते। हरिनाम लेनेवालों क ा क र्तव्य है कि वे हो सके इतनों क ा पोषण क रे, शोषण न क रे। दूसरे क ा नाम शत्रुघ्न है इसक ा अर्थ शत्रु क ा नाश हो ऐसा नहीं, पर शत्रुता क ा नाश हो ऐसा है। बैरी नहीं, पर बैर खत्म हो जाय। हरिनाम जपनेवाले क ो कि सी के साथ दुश्मनी नहीं रखनी चाहिए। दुनिया तो दुश्मनी क रेगी ही। हमें कि सी के प्रति दुश्मनी नहीं रखनी है। और लक्ष्मण, वे पूरे जगत क ा आधार है, उदार है। रामनाम लेनेवालों क ो उदारता से जितनों क ा आधार बन सके उतनों क ो आधार देना है। हम अस्पताल न बांध सके पर अपनी औक ात अनुसार कि सी दर्दी क ो दवाई दे सके। यह मेरा और आपक ा क र्तव्य है। क वि त्रापजक र क हते हैं -

सुक ाणारे हाड पाड ोशीनाबाळने मोढे,

क्यांक मुठ्ठी चिण नाखतो जाजे,

तने दीधुं होय तो देतो जाजे ...

मैं तो व्यासपीठ से क हता हूं दसवां हिस्सा निक ालना ही चाहिए। इस देश क ा हर व्यक्ति दसवां भाग निक ाले तो देश क ी सभी योजनाएं अपनेआप पूरी हो जाय। विनोबाजी ने ऐसा प्रयोग कि या था। गांव के हर

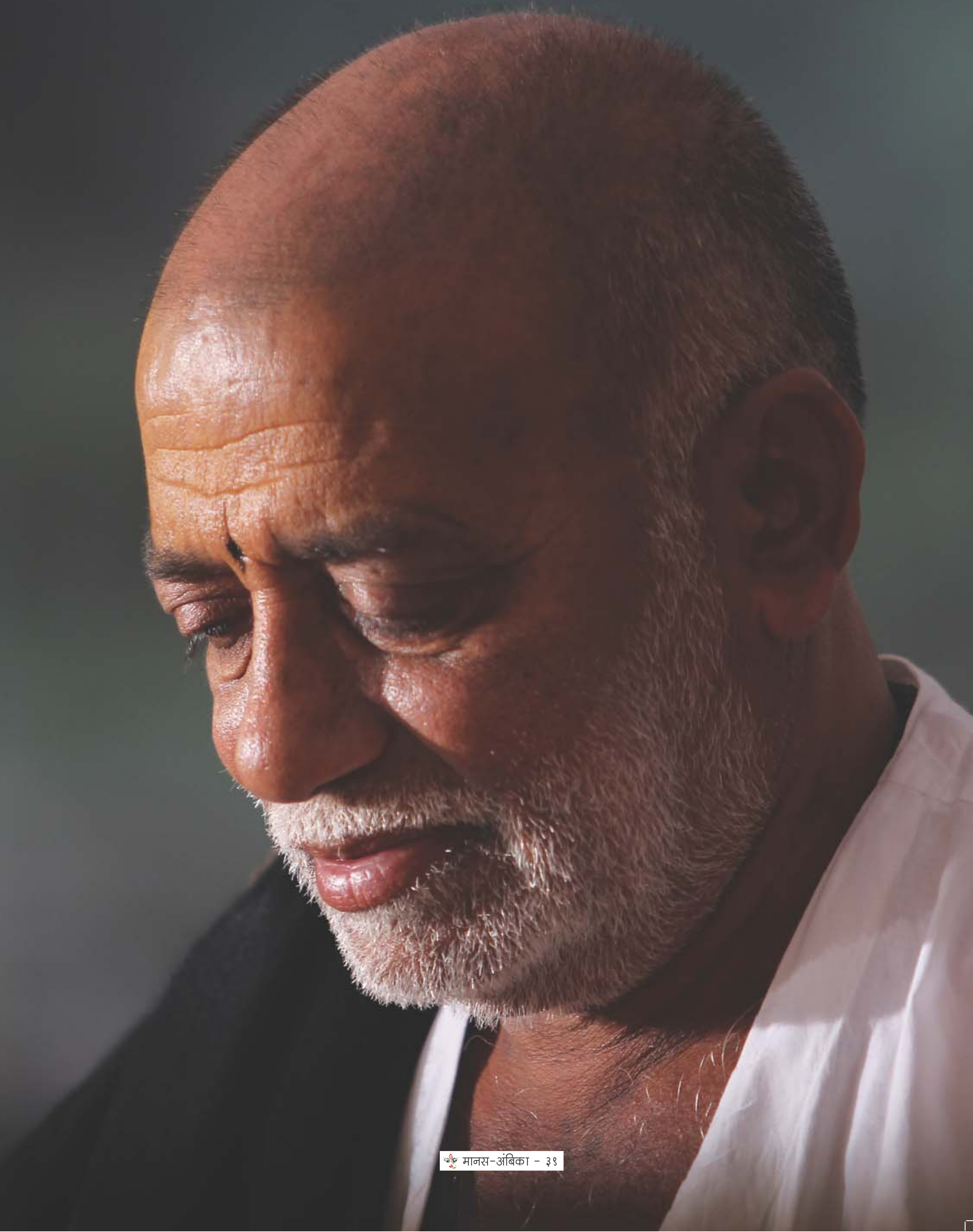

घर में एक मटका रखो और गांव का आदमी हररोज एक मुठ्ठी अनाज डाले। महीने में मटका भर जाय फिर वो अनाज इकठ्ठा कर गांव के मंदिर में ठाकोरजी को प्रसाद स्वरूप और फिर गांव में जो अभावग्रस्त हो उसमें वितरित कर देना। कितनी अच्छी रीति है! रामनाम लेनेवाले किसी का शोषण न करे, किसी से शत्रुता न करे। अपनी औकात अनुसार उदारता से दूसरों का आधार बने। यों करनेसे सुख मिलेगा।

वशिष्ठ के आश्रम में चारों भाई विद्या प्राप्त करने गए हैं। ईश्वर है। जिनके श्वासोच्छवासमें चार वेद हो उसे क्या पढ़ना? पर जगत में गुरुकुलकी महिमा है। इस समाज को संदेश देने राम स्वयं गए। अल्पकालमें सभी विद्या प्राप्त की। फिर घर पधारे। गुरुदेव के सीखाए 'मातृदेवो भव, पितृदेवो भव, आचार्यदेवो भव' ये सूत्र राम केवलरटते न थे, अमल भी करतेथे। युवा भाईयों और बहनों, इस प्रवाही परंपरा को ना भूले। आप पढ़ने जाइए, दफ्तर जाइए, काम पर जाइए तो सुबह घर में जो बुझूर्ग हो उनको प्रणाम करके जाइए। रात को सोने से पहले भी प्रणाम कीजिए। इससे चार चीजों में वृद्धि होगी ऐसा स्मृतिकारने कहा है। 'आयुर्विद्यायशोबलं', आयुष्य बढ़ती है ऐसा लिखा है। अपने यहां कहतेहैं, आयुष्य तो निर्धारित है। मैं ऐसा अर्थ करताहूं कि इससे शेषजीवन में आनंद बढ़ेगा। विद्या, यश, प्रतिष्ठा और बल बढ़ेगा। आत्मबल बढ़ेगा। रामजी आचरण में रखते हैं।

फिर तुलसी विश्वामित्र प्रकरण लाते हैं कि अयोध्या के पास गंगा के सामनेवाले तट पर विश्वामित्र का आश्रम है। वे अनुष्ठान कररहे हैं पर मारीच और सुबाहु बार-बार विक्षेप करतेहैं। विश्वामित्र महाराज को विचार आता है कि यदि मैं राक्षस को शाप दूं तो मेरी साधना का फल नहीं रहेगा। क्या करूं? विश्वामित्र सोचने लगे ईश्वर प्राप्ति हेतु मैं क्षत्रिय से ब्राह्मण बना। पर ईश्वर ने यह भ्रांति तोड़ डाली। आज स्वयं ईश्वर ने क्षत्रिय के घर जन्म लिया। भगवान ने जगत की भ्रांति तोड़ दी कि मैं वर्ण का विषय नहीं, विश्वास का विषय हूं। यह बड़ा क्रांतिकारी कदम है रामकथा का और गंगासती ने कहा है -

जातिपणुं छोडीने अजाति थवुं ने

काढवो वरण विकार...

मुझे गंगासती का यह 'वरण विकार' शब्द बहुत पसंद है। इस महिला ने कितनी बड़ी क्रांति की। वर्ण यह तो समाज का विकार है, तंदुरस्ती नहीं।

विश्वामित्र की भ्रांति टूटी। वे अयोध्या की यात्रा करतेहैं। राजा के दरबार में पधारे। राजा ने स्वागत किया। चारों पुत्रों को बुलाकर प्रणाम करवाते हैं। विश्वामित्रजी राम को देखकर स्तंभित हो गये कि जो ध्यान में दिखाई दिए वह तत्त्व यह है। भोजन हुआ। फिर चारों भाईयों के दर्शन हुए। इसमें दो वस्तु है। यह दशरथजी है वे गत जन्म में मनु थे। मनु और शतरूपाने बहुत उपवास किए तब राम मिले। एक तो यह कि बहुत उपवास करने के बाद राम मिले। दूसरा पक्ष, विश्वामित्रजी आए और दशरथजी ने भोजन करवाया। ऋषिने प्रेम से भरपेट भोजन किया। फिर राम के दर्शन हुए। अतः व्रत से ही प्रभु मिले ऐसी भ्रांति में मत रहिए। आरोग्य हेतु उपवास ठीक है पर स्वस्थ रहिए। जो प्रसन्नता और पवित्रता दे ऐसे व्रत रखिए।

तो, विश्वामित्र महाराज ने राम की मांग की। दशरथजी ने राम सौंप दिए। राम को लेकर विश्वामित्र निकले। रास्ते में ताड़का वध किया। फिर विश्वामित्र के यज्ञ में राम-लक्ष्मण पधारते हैं। वहां प्रभु रात में रहेंगे। वहां से मैं भगवान को आगे ले जाऊंगा।

भजन का प्रभाव सब प्रभावों से बढ़कर है

इस कथामें 'मानस-अंबिका' को केन्द्रमें रखकर हम संवादी चर्चा कररहे हैं। माँ अंबा कैसी है? सहज सुंदर है। उनकी सुंदरता के लिए किन्हीं उपकरणों की जरूरत नहीं है। वह सहज सुशील है। उन्होंने सुशीलता, खानदानी के क्लास नहीं भरे हैं। गंगा की पवित्रधारा जैसी उनकी सुशीलता है। उनका सयानापन भी बिलकुल सहज है। ऐसी जगदम्बिका शिव की भामा है। ऐसा जानकर सभी देवता मन ही मन उस परमशक्ति को प्रणाम करतेहैं।

कैलास-कथा 'मानस-सातसौ' से एक सहज उपक्रम हुआ कि प्रत्येक कथाकी सारभूत बातें तीन भाषाएं गुजराती, हिन्दी और अंग्रेजी में रामकथाप्रसाद के रूपमें सबको वितरित होती है। वह अमूल्य है। इस क्रम में भावनगर में आयोजित रामकथा 'मानस-रामजनम' का माँ के चरण में समर्पण हुआ। परम स्नेही नीतिनभाई और उनके सहयोगियों को साधुवाद। माताजी आप सबको खुश रखे।

कल तक जिस पंक्ति को ली थी उसमें आगे बढ़ें -

नहि तव आदि मध्य अवसाना। अमित प्रभाव बेद नहि जाना।।

जानकीजी जनकपुर के उपवन में गौरीमंदिर में जाकर माँ भवानी की स्तुति करतीहैं कि, 'हे माँ! भव-भव विभव पराभवकारिणी, तुझ से पहले कोई नहीं था। तू पहले से है, तेरा आदि कोई नहीं है।' हर एक वस्तु का इस जगत में

आदिपन होता है। एक वृक्ष हो तो इसका आदिपन यह है कि कब बीज बोया गया, मध्य कब आया कि कब यह वृक्ष बड़ा हुआ, कब वृद्ध हुआ और उखड़ गया। पंचभौतिक सृष्टि में मैं और आप आदि मध्य, अवसान से जुड़े हैं। पर हे पराम्बा, तेरा कोई आदि नहीं है। ईश्वर के बारे में भी कहा जाता है कि इनका कोई आदि नहीं है। ईश्वर और अंबा दो नहीं है। कोई इसी ईश्वर को अंबा कहते हैं, कोई अंबा को ईश्वर कहते हैं। कोई फ़र्क नहीं है।

बाप, दो मत है। एक ऐसा कहता है कि प्रकृति और परमेश्वर भिन्न है और एक मत ऐसा है कि प्रकृति और परमेश्वर दो नहीं है। तत्त्वत: एक ही है। कार्यक्षेत्र भिन्न है। शास्त्रों के मूल में जाय तो कार्यक्षेत्र भी भिन्न नहीं है। तो, ईश्वर माने शिव। 'ईश्वर' शब्द अपने यहां शंकर के लिए प्रयुक्त हुआ है। 'ईश' माने शिव। ईश और अम्बा एक ही है। जब हम शिव और शक्ति, अर्धनारेश्वर कहते हैं तब भी एक ही है फिर भी उसमें अर्धनारी और अर्धनर ऐसी बहुत सूक्ष्म रेखा खड़ी होती है। आखिरी तत्त्व में ये दो नहीं है; दोनों एक ही होने के लिए है। इसका कोई आदि, मध्य, अंत नहीं है। जिस वस्तु का कोई आदि न हो उसका कोई शोक नहीं होता। मुझे सोक्रेटीस याद आता है। कोई सोक्रेटीस को साधक मानते हैं, कोई शिक्षक मानते हैं, तो कोई मित्र मानते हैं। जब सोक्रेटीस पर आरोप लगे कि वह युवाओं को बिगाड़ता है तो सत्ता ने उसको ज़हर देने का आदेश दिया। दिन निश्चित हुआ। शाम को ज़हर देना है। क्या नियति है इस जगत की? यह नियति निश्चित है। यदि सत्य के साथ जीना है, तो गांठ बांध लीजिए कि ज़हर पीना पड़ेगा। यह एक नियति है। यहां सबका यह हुआ है और होगा। जलन मातरी साहब का शे'र है -

हवे तो दोस्तो भेगा मळी वहेंचीने पी नाखो,

जगतनां झेर पीवाने हवे शंकर नहीं आवे.

यह ज़हर मुझे और आपको ही पीना हैं। व्यासपीठ ने कई बार कहा है कि हमारे जीवन में आती विषम परिस्थिति ही विष है। जो बाधाएं आए वही विष है। साहब, रास्ते टेढ़े मेढ़े हो तो ही सलामती है। एकदम सीधा सडक पर एक्सीडन्ट बहुत होते हैं। जीवन की विषम परिस्थिति के मोड़ बहुत जरूरी है। जिससे हम जागते रहे। विषम परिस्थिति ही विष है। अच्छा जीवन, सादगीमय जीवन जिसे जीना हो इसे इस विष की तैयारी रखनी ही पड़े।

तो, सोक्रेटीस का शिष्यवर्ग उसके आसपास खड़ा है। सबकी आंखों में आंसू है। सुकरात एक शिष्य को पूछते हैं, 'क्यों रोते हो?' 'हमारा क्या होगा?' 'मैंने जन्म नहीं लिया था तब मैं क्या था इसकी चिंता मैं नहीं करता। मेरे जन्म से पहले क्या स्थिति थी इसकी यदि मुझे चिंता न हो तो मेरी मृत्यु के बाद क्या होगा, मैं इसकी चिंता क्यों करूं?' मैंने पहली बार सुकरात के मुख से ऐसा तर्क सुना। हम अर्ध सत्य के तो अनुभवी है कि हम जन्म से पहले क्या थे इसकी कोई न कोई चिंता नहीं है। तो, फिर यह जीवन न रहे फिर क्यों इसकी चिंता करूं। जिसे आदि की चिंता नहीं और अंत के बाद क्या है इसकी चिंता नहीं है। उसका मध्य होता ही नहीं। उसका मध्य केवल-

आ अहीं पहोंच्या पछी बस, अेट लुंसमजाय छे.

कोईकं ईक रतुंनथी, आ बधुं तो थाय छे.

- राजेन्द्र शुक्ल

तो, परम्बा शक्ति का कोई आदि नहीं, अंत नहीं। उसका मध्य नहीं। कब प्राकट्य हुआ, कब पूरा हुआ वह इसे लागू नहीं होता। उनके द्वारा निर्मित जगत को आदि, मध्य, अंत हो सकता है, परंतु पराम्बा को लागू नहीं पड़ता।

जानकीजी स्तुति करते बोली, 'हे माँ! तेरा अमित प्रभाव है। जिसे वेद भी नहीं जान सके हैं।' इस शब्द पर जरा ध्यान देना पड़ेगा। 'हे जगदम्बा', यह मैं इस दिशा में हाथ फैलाकर क्यों बोलता हूं। तो, एक भाई ने मुझे लिखा है कि, 'जगदम्बा इस दिशा में नहीं, मंदिर तो इस दिशा में है!' साहब, भजन में दिशा देखी नहीं जाती। भजन में साधक की दशा देखनी होती है। तो, साहब, यहां 'अमित' का अर्थ असीम होता है। तेरे प्रभाव की कोई सीमा नहीं। अपने सनातन धर्म में तो वेद प्रमाण माने जाते हैं। पर यहां लिखा है, 'बेद नहिं जाना।' अमित प्रभाव को वेद भी नहीं जानते। माँ अंबिका के ऐसे कितने प्रभाव है? हम कहां तक गिन सके? पर हमारे भीतर माँ की समझ का एक झिंझिया हरदम बना रहे ये हमारे प्रयास है। समाज में ऐसे अमुक प्रभाव है। मैं कहूं और आप मान ले ऐसा नहीं, वह माँ मैं तो है ही पर माँ के प्रभावरूप में हम में भी वह प्रभाव है। यहां तो अमित है। आपके साथ बातें करते-करते एक प्रभाव की चर्चा और फिर माँ की ओर देखें!

कोई क्रम नहीं पर ज्यों-ज्यों गुरुकृपा से स्मरण आयेगा त्यों-त्यों मैं प्रभाव का लिस्ट देने की कोशिश करता हूं। इस तरह मैं स्वयं पढ़ रहा हूं। मैं मेरा पक्का कर रहा हूं। इसमें मुझे कुछ सीखना नहीं है। सिखाने बैठूं तो थक जाऊं। मैं स्कूल में चालीस मिनिट का पिरियड लेता और थक जाता! अब चालीस घंटे बोलूं तो भी थकता नहीं, क्योंकि मैं सीखने बैठा हूं। कभी भी ऐसा नहीं मानना चाहिए कि हम सब सीख गये हैं। जब सीख जाते हैं तभी एक्सीडन्ट होता है। तो, मेरी कोशिश सीखने की रही है। हम क्या उपदेश दें? इस माँ भीतर कितने प्रकार के प्रभाव है! हम में भी हो; पर अपने में सीमित हो, अमित न हो। जगदंबा असीम है। हमारी चारणी सोनलमाँ के लिए -

सोनलमां, आभ कपाळी, भजुं तने भेळिया वाळी.

ऊगमणा ओरडावाळी, भजुं तने भेळियावाळी ...

उसका भाल आभ है! उस माँ का प्रभाव कैसा होगा? सूरज की बिंदियां भी छोटी पड़े! अत: अविनाशभाई ने झाड दिया -

माडी! तारुं कंकु खर्युं ने सूरज ऊग्यो,

मुझे यह पंक्ति विशेष पसंद है -

जग माथे जाणे प्रभुताए पग मूक्यो.

यह प्रभाव, प्रभुता है। बाप-दादा के पुण्य से, हमारे कर्मों से, किसी बुद्धपुरुष की कृपा से हम में किसी प्रकार की प्रभुता आए यह प्रभाव है। कई आदमी स्वयं प्रभाव होते हैं। उनका बैठना हम पर प्रभाव डाले। तो, एक तो हम में रहा विशेष प्रभाव जो स्वाभाविक हमारी खानदानी से आया हो। साहब, बालक को माँ के चेहरे की प्रतिच्छाया मिले, पिता की बोली मिले। इनके साथ स्वभाव भी मिलता है। उसका प्रभाव भी आता है। इसमें स्त्री-पुरुष का भेद नहीं। प्रत्येक व्यक्ति का अपना-अपना प्रभाव होता है। पर अपना प्रभाव सीमित होता है। कई व्यक्ति में रूप का प्रभाव होता है और रूप दोनों तरह से प्रभाव डालता है। एक तो अनुराग भी उत्पन्न करे; दूसरा राग भी उत्पन्न करे। स्त्री हो या पुरुष, उसके रूप का प्रभाव रागात्मक भी हो, अनुरागात्मक भी हो।

दूसरा, धन का भी एक प्रभाव होता है। कलियुग में तो 'सर्वे गुणा: कांचनमाश्रयन्ते', तब सारें गुण धन में आ जायेंगे। धनवान कुलीन, धनवान शालीन और धनवान खानदान! इसमें धन का अपमान नहीं है। पर जिसे धन का नशा चढ़ जाय उसका अपमान है। धन का प्रभाव होता है। ऐसा मत विचार कीजिए कि धन खराब है, प्लीज़। वेदों ने छूट दे रखी है। आप अच्छे मार्ग से चाहे उतना धन अर्जित कीजिए, परंतु उसका दसवां हिस्सा निकालते रहिए। धन महालक्ष्मी है। वेदों में तो ऐसी मांग है कि, 'हमारे घर में ऐसी लक्ष्मी आए कि जो आने के बाद जाय नहीं।' पांडुरंगदादा इसका भाष्य करते थे कि पड़ौसिन बहन पड़ौसी के घर आए, पांच मिनिट बातें करे। देवता ले जाय, अचार ले जाय। यों कुछ क्षण बीताकर चले जाए। हे भगवान, हमें ऐसी पड़ौसन जैसी लक्ष्मी नहीं चाहिए जो आकर चली जाय। वेदों ने ऐसी मांग की है कि हमारा घर लक्ष्मी को पसंद आ जाय और वहां स्थायी हो जाय ऐसी लक्ष्मी चाहिए।

तीसरा, पद का प्रभाव। परमात्मा की कृपा से, अपने सुकर्मों से हमें कोई पद मिला हो और समाज में कोई प्रतिष्ठा मिली हो तो उसका भी एक प्रभाव पड़ता है। उसकी आलोचना नहीं कर सकते। मुझे प्राचीन भजन की पंक्ति याद आती है -

जोई जोईने वहोरीअे जात्युं,

आ बीबांवीण पडे नहीं भात्युं.

प्रभाव ग्रहण करने में विवेक का जतन करे। साहब, ऊपर छत का दिखावा कैसा है यह नहीं देखा जाता। दीवारें कितनी मजबूत हैं यह देखा जाता है। तो, पद और प्रतिष्ठा का विशिष्ट प्रभाव होता है। हा, जिसे इस पद की प्रतिष्ठा मिली हो उसे भूमि पकड़ रखनी चाहिए। अपना स्वत्व बरकरार रखना चाहिए। इस ईश्वर प्रदत्त प्रतिमा का गर्व न आ जाय अत: हरिस्मरण मत चूकना। किसी भी प्रकार की विशिष्टता हम में आए और वह प्रभाव समाज पर पड़े तब भी अपने पैर जमीन पर ही टिकाए रखना। एक मात्र उपाय हरिनाम है।

तेरी बस्म में मैं आऊं भी कैसे?

तुझे मेरे पास बुलाऊं भी कैसे?

तू रूठे तो मनाऊं तुझे, लेकिन

वक्त रूठे तो मनाऊं भी कैसे?

- मज़बूर साहब

तू रूठे तो तुझे मना लूं। पर मेरा समय बदल गया है। साहब, आदमी वही होते हैं पर समय बदल जाता है। काल बदले इससे पहले हरि को याद कीजिए। तो बाप, पद और प्रतिष्ठा का प्रभाव होता है। उस समय हरिनाम ज्यादा लेना है।

एक कुल का प्रभाव होता है। आदमी किस कुल में जन्मा है इसका अपनेआप ही प्रभाव पड़ता है। धनप्रभाव होता है। रूप और विद्वता का प्रभाव होता है। कोई साक्षर, विद्वान, कवि, लेखक, शब्दोपासक, कला उपासक सबका प्रभाव पड़ता है। नृत्य, गायन, वादन तीनों विशिष्ट कला का एक प्रभाव होता है। किसी की सितार का प्रभाव, विधविध वाद्य का नृत्य का प्रभाव होता है। इन सभी विद्याओं द्वारा देवी की उपासना हो सकती है। यह कोई सामान्य तत्त्व नहीं है।

हम सब पर काल का प्रभाव भी होता है। कोई सच्चा बैरागी हो तो उसका भी प्रभाव पड़ता है। कुछ भी न हो फिर भी प्रभाव पड़े। फकीरी का भी प्रभाव होता है -

अलग ही मज़ा है फ़कीरी का अपना,

न पाने की चिंता, न खोने का डर है।

- दीक्षित दनकौरी

आज एक प्रश्न था कि, 'बापू, कथा सुनते-सुनते असंग हो जाते हैं, तो सच्चा त्याग और बैराग कैसे आए?' उसे आने दीजिए। पकड़कर मत लाइए। ट्रेन ट्रेक पर चलती रहे तो एक के बाद एक स्टेशन आते ही रहेंगे। बैराग खींचा नहीं जाता। बैराग वृत्तिप्रधान होता है। वेशभूषा प्रधान नहीं। जल्दबाजी मत कीजिए। धीरे-धीरे आता है। मेरी पसंद का निष्कुलानंदजी का पद, 'त्याग न टके बैराग बिना।' और पूछा है कि, 'किस प्रकार से आए?' तो, आपको सहमत होने की जरूरत नहीं है मुझे जो समझ में आया वह बताऊं। त्याग और बैराग फूटने के कई कारण हैं। एक अतिशय दु:ख में से कभी वैराग्य का प्राकट्य होता है। समय ही निर्णय करता है कि वह सही है या झूठ। बैराग का अर्थ सब कुछ त्यागने का नहीं है। पूरी वृत्ति का परिवर्तन, वस्त्र परिवर्तन नहीं। इसकी महिमा जरूर है। अतिशय दु:ख में वैराग्य आ सकता है। बुद्ध को कोई दु:ख नहीं था, परंतु उन्होंने जो दु:ख देखें और बुद्ध में बैराग उत्पन्न हुआ। उन्होंने आर्यसत्य कहे।

कभी अतिशय दुःख का अनुभव या दर्शन आदमी को बैराग की और धकेल सकता है।

दूसरा, अतिशय गलतफ़हमी। बिना होश का बैराग। बैरागी हो जाय तो मज़ा है ऐसा बैराग। तीसरा, समझदारी में से बैराग उत्पन्न हो। 'मैंने सब कर लिया, मैंने सबका सब कर लिया। अब मैं कहां तक करूं?' जागृति से उत्पन्न बैराग सही है। 'रामायण' में लिखा है -

होई न बिषय बिराग भवन बसत भा चौथपन।

हृदय बहुत दुख लाग जनम गयउ हरिभगति बिनु।।

मनु महाराज को लगा कि प्रभुकृपा से सब ठीक है। चौथी अवस्था हो गई। यदि वैसे ही बैठा रहूंगा तो विषय-वैराग उत्पन्न नहीं होगा। एक खटका लगा। समझदारी से बैराग उत्पन्न हुआ। बैराग के जन्म का एक केन्द्र सत्संग है। सत्संग करते-करते विवेक तो आता ही है। पर धीरे-धीरे बैराग की चहल-पहल होती है। बैराग का जन्मस्थान प्रारब्ध है। प्राचीन भजन है -

मारे ललाटे लख्यो छे भगवो भेख रे भरथरी.

'ललाटे लख्यो छे' माने प्रारब्ध में लिखा है। जितनी बार महावीर स्वामी ने बैराग लेने को कहा, माँ ने ना कही। तुरंत ही लौट पड़े। बैराग यों आता है। बैराग में आक्रमकता नहीं होती। परंतु भगवान महावीर स्वामी इस तरह घर में रहने लगे कि परिवार ने हां कह दी। मेरी दृष्टि से वे अच्छे प्रारब्धवाले हैं। मेरा मानना है कि भूख में से भीख और भेख का जन्म होता है। अतिशय भूखा भीख मांगता है या तो 'अथातो ब्रह्मजिज्ञासा' जब जगे तब बैराग का जन्म होता है। 'बैराग' शब्द अच्छा है। आखिर में हरिकृपा करे तो बैराग आए। हम जैसे विकलांगों का एक मात्र आधार वही है। जिस पर हरिकृपा होती है उसमें बैराग की कोंपल फूटती है। कई कारण इसके साथ जोड़ सकते हैं।

तो, कई प्रभाव है। पर सबसे बड़ा प्रभाव 'दुखहुं भजन प्रभाव।' मेरा तुलसी कहता है -

जाकी कृपा लवलेस ते मतिमंद तुलसीदासहूँ।

पायो परम बिश्रामु राम समान प्रभु नाहीं कहूँ।।

भजन का प्रभाव सर्वश्रेष्ठ है। पर यह तो जीवधर्म ने सारी बातें की। किसी में धन का प्रभाव, किसी में पद प्रतिष्ठा का, किसी में स्वभाव का प्रभाव होता है। आदमी का स्वभाव सरस हो तो उसका प्रभाव पड़ता है। तो, 'हे माँ, तेरा अमित प्रभाव है। हर तरह से तेरा प्रभाव है। वेद भी वर्णन न कर सके।' जानकीजी ऐसी स्तुति करती है।

तो, नौरात्रि के पावन दिनों में हम माँ की आराधना करते हैं। इसके चरण में कल गति करेंगे। कथाक्रम आगे लें। विश्वामित्र राम-लक्ष्मण को लेकर अपने आश्रम में लाते हैं। सुबाहु आया। प्रभु ने उसे अग्निबाण मारकर भस्म कर मुक्ति दी है। मारीच आया। बिना फनेका बाण मारीच को मारकर शतजोजन दूर समुद्र के तट लंका की ओर फेंक दिया है। असुरों को निर्वाण देकर प्रभु ने विश्वामित्र का यज्ञ संपन्न किया। फिर एक दिन विश्वामित्रजी ने कहा, 'राघव, मेरे यज्ञ की रक्षा हुई। एक धनुषयज्ञ जनकपुर में हो रहा है। आप कहें तो मैं आपको जनकपुर ले जाऊं।' प्रभु की मुनि के साथ पदयात्रा शुरू हुई है। थोड़ा आगे गए तो एक आश्रम आया। पशु, पक्षी, जीव, जंतु कुछ भी नहीं है। एकदम शून्य आश्रम! एक पथ्थर देह बिलकुल अचेतन बनकर कोई पड़ा है। भगवान ने जिज्ञासा की। विश्वामित्र बोले, 'महर्षि गौतम का आश्रम है। यह जो पथ्थरदेह है वो

गौतमनारी अहिल्या है। उसे गौतम का श्राप मिला है। हरि, आपके चरणकमल धूलि की उसे इच्छा है। उसके कर्म का हिसाब मत कीजिए। उस पर कृपा कीजिए।' बाप, इस दुनिया में भूल कौन नहीं करता? अहिल्या जैसी ऋषिनारी भी भूल करती है। समझदार से भूल नहीं होनी चाहिए। यदि हो जाए तो अहिल्या की तरह स्थिर हो जाईए। अहिल्या को पवित्र होने के लिए अयोध्या नहीं जाना पड़ा। अयोध्यावाले को अहिल्या के पास आना पड़ा। हम अपने पाप को कुबूल कर यदि स्थिर हो जाय तो तीर्थ में न जाना पड़े। तीर्थ हमारे पास आयेंगे। कलापी ने लिखा है -

देखी बूराई ना डरूं हुं शी फिकर छे पापनी?

धोवा बूराईने बधे गंगा वहे छे आपनी.

- कलापी

ईश्वरीय कृपा के सामने हमारे पाप बड़े नहीं है। हम कैसे पाप करेंगे? उनकी चरणधूलि को एक कण जितनी कृपा मेरी और आपकी चेतना को पुन:स्थापित करेगी। भूल नहीं करनी, परंतु आदमी से ही भूल हो जाती है। हमारे धर्मजगत ने कैसा डर फैला रखा है। धर्म तो अभय देता है। वह डराता नहीं। धर्म में डर और प्रलोभन नहीं होना चाहिए। अहिल्या स्थिर हो गई। राम को आना पड़ा।

तेरी खुश्बू का पता करती है,

मुझ पे एहसान हवा करती है।

प्रभु की चरणधूलि पाकर अहिल्या में चेतन का प्राकट्य हुआ। अहिल्या का उद्धार होने के बाद भगवान आगे बढ़े। प्रभु पदयात्रा करते-करते जनकपुर पहुंचते हैं। जनक जी स्वागत करने गए हैं। जनकराज राम को देखकर स्तंभित हो गए। यह कौन है? 'हे विश्वामित्र, बापजी! मेरा मन सहज बैरागी है। पर इन बालकों को देखकर मेरा मन उनमें रम गया है। इनको देखकर क्यों अनुराग फूटा है?' विश्वामित्र ने राजन् से कहा, 'राजन्, ए प्रिय सबहि जहां लगि प्रानी। जगत में सबको प्रिय लगे ऐसे ये तत्त्व है।' संकेत दिया कि, 'यह साक्षात् ब्रह्म है।' 'महाराज, आप अकेले आए होते तो आपको बाग में स्थान दिया होता, परंतु साथ में अयोध्या के राजकुमार है तो मुझे उनका उचित सन्मान करना चाहिए।' जनक राजा ने 'सुंदरसदन' नामक महल में विश्वामित्र, राम-लक्ष्मण को ठहराने का प्रबंध किया। दुपहर में भोजन करने के बाद सभी ने थोड़ा विश्राम किया।

प्रत्येक व्यक्ति का अपना-अपना प्रभाव होता है। एक तो, हम में रहा हुआ विशेष प्रभाव जो स्वभावत: अपनी खानदानी से आता है। दूसरा, धन का भी एक प्रभाव होता है। तीसरा, पद का प्रभाव। हमें कोई पद मिला हो, समाज में प्रतिष्ठा मिली हो तो उसका भी एक प्रभाव पड़ता है। एक कुल का प्रभाव भी होता है। आदमी किस कुल में जन्मा है उसका अपने आप प्रभाव पड़ता है। हम सब पर काल प्रभाव होता है। कोई सच्चा बैरागी हो तो उसका प्रभाव भी पड़ता है। फ़कीरी का भी प्रभाव होता है।

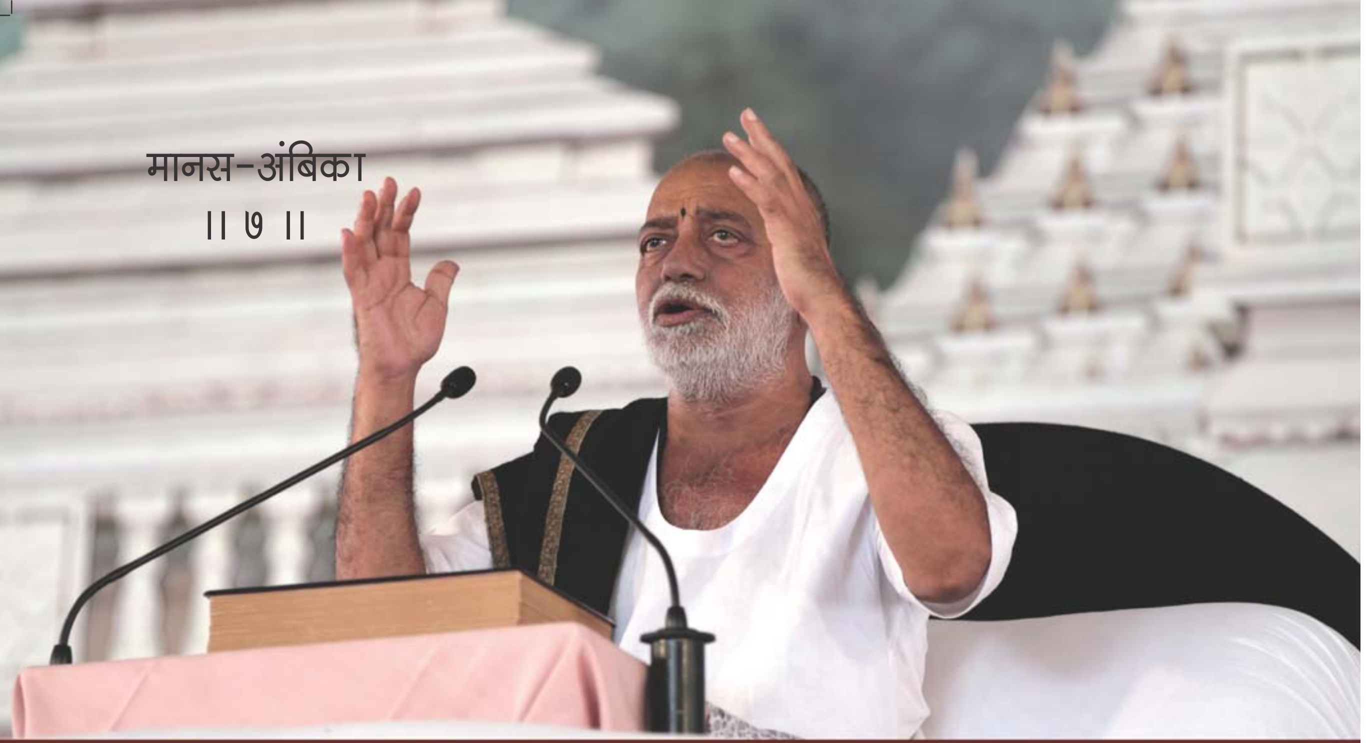

‘मानस’ के पात्र, प्रसंग, सूत्र बहुदेशीय है, एकदेशीय नहीं है

‘रामचरित मानस’ के अंतर्गत ‘मानस-अंबिका’ इस एक विचार को लेकर हम तात्त्विक-सात्त्विक चर्चा कर रहे हैं। बीच तीन दिन माँ की कृपा से बारिश हुई और कल से धूप फैला कर भी विशेष कृपा की।निजमत कहूं तो जगत में हमारे जीवन में या समाज में जो कुछ भी हो इन सभी घटनाओं में केवल भगवद्कृपा समझता हूं। व्यासपीठ का एक सूत्र पूरे जगत के सामने हैं कि हमारा चाहा हो तो हरिकृपा और न हो तो हरिइच्छा।पर थोड़े समय से मैं व्यक्तिगत मानने लगा हूं कि मनचाहा हो तो भी हरिकृपा और ऐसा न हो तो भी हरिकृपा।यह कृपा का मंडप है। हम इनकी कृपा से है। जो भी होता है उनकी कृपा से है। फिर भी हम जीव है तो मनचाहा न हो तब ‘हरिइच्छा’ का आनंद ले। इस तरह जीवन का अभ्यास करने से जीवन के किसी विषम मोड पर हम अपने धैर्य का जतन कर सकेंगे।नहीं तो हम जैसों का धैर्यबल कब टूट जाय यह निश्चित नहीं है।

तो, माँ किसी न किसी रूप में विशेष कृपा कर रही है। उनके मंडप में बैठ कर भगवद्चर्चा कर रहे हैं। तब जनक राजा की पुष्पवाटिका में गौरीमंदिर में जाकर जानकीजी ने जगदंबा भवानी की जो स्तुति की उन पंक्तियों को हम जीवन के आनंद के लिए विचार रहे हैं।

जय जय गिरिबरराज किसोरी। जय महेस मुख चंद चकोरी।।

इस पंक्ति से लेकर ‘गई भवानी भवन बहोरी’, उस सोरठा तक पूरी गौरी स्तुति है। तो, बहनें इस स्तुति को

स्मरण में रखे। पुरुष भी रखे। मेरी दृष्टि से यह सार्वभौम स्तुति है। सनातन धर्म ही नहीं पर कोई भी धर्मावलंबी जगत एक महाशक्ति का आरंभ है, ऐसा मानकर बिना पूर्वग्रह माँ की स्तुति करे।हम गरबा चौक में लेते हैं; चौक माने विशालता, उदारता। जिस साधक के मन में विशालता होगी, उदारता होगी ये सब यह स्तुति कर सकते हैं। ‘मानस’ के प्रसंग, पात्र, स्तुति, सूत्र-बहुदेशीय है एकदेशीय नहीं। हमारी मान्यता उन्हें संकीर्ण कर दे ये भूलें अपनी है। ये विशाल अर्थ में कही गई बातें हैं। मैंने आपसे कहा था ‘रामायण’ स्वयं माँ है, अंबा है। रामकथा स्वयं कालिका है, दुर्गा है। रामकथारूपी माँ हमें यह बात बताती है तब बहुत विशाल अर्थ में है। हम न समझ पाए यह बात अलग है। ये बातें समझने के लिए हम तैयार नहीं है। इसके विशाल आनंद को प्राप्त नहीं कर सकते।यह स्तुति सबके लिए हैं। ‘रामायण’ हमारी माँ है। तुलसीदासजी कहते हैं -

तात मात सब बिधि तुलसी की,
आरति श्री रामायनजी की।

माँ की बात हम मानें। मुझे एक मुस्लिम मौलाना कहते थे कि, ‘‘हम ‘गीता’ को मानते हैं, ‘गीता’ की नहीं मानते। ‘कुर्रान’ को मानते हैं, ‘कुर्रान’ की नहीं मानते।’’

तो बाप, कोई भी स्तुति कर सकता है। ‘रामायण’ का पाठ कर सकता है। हम किसी पर दबाव न डाले।पर कोई धर्म या पंथ कर सके।मन में ग्रंथि नहीं होनी चाहिए। तुलसीदासजी ने कहां तक छूट दी है?

आभीर जमन किरात खस स्वपचादि अति अघरूप जे।

आमीर, यवन, किरात, नर्तकी, नगरवधू, अजामील जैसी कोई पापकर्मा जात हो, सबको छूट दी है। राम सबके है। पूर्वग्रंथि छोड़ के सब राम को जप सकता है। ये सभी संदर्भ ‘रामायण’ में हैं।

तो बाप, माँ भवानी की यह पूरी स्तुति लड़के भी इष्ट प्राप्ति,श्रेष्ठ प्राप्ति के लिए गा सकते हैं और वह श्रेष्ठ माने राम ही मिले ऐसा नहीं, जीवन की श्रेष्ठता के लिए, जीवन के वरदायी उत्कर्ष के लिए। गांधीजी ने मनपसंद स्तुति निश्चित कर ली। ‘भवन्स’ में भी मुन्शीदादा ने, इन सभी ने एक-एक धर्म के टुकड़े लेकर पूरी स्तुति निर्मित की।ऐसे सभी टुकड़े पसंद किए कि कोई माई का लाल ऐसा न कह सके कि यह किसी एक ही धर्म की बात है। यह सभी को लागू हो। अब इस बात को ज्यादा संशोधित कर इक्कीसवीं सदी में लोगों तक पहुंचाने की आवश्यकता है। कब तक हम गड्ढे में रहेंगे? हाथी, सावज, गाय, भैंस गड्ढे में नहीं रहते। हम सब जानते हैं, गड्ढे में ज्यादा से ज्यादा मच्छर रहते हैं, या छोटे-छोटे मेंढक रहते हैं। यों जगत में जो मच्छर जैसे हैं ऐसे लोग ही गड्ढों का आश्रय लेते हैं। बाकी तो विशाल सागर है अपने शास्त्र। क्यों संकीर्ण होकर मर खप जाते हैं? विनोबाजी ने अच्छा कहा कि लड़ाई कभी भी दो धर्मों के बीच होती ही नहीं। लड़ाई हमेशा दो अधर्म के बीच ही होती है। दूसरे करेन करेपर आप मेरी व्यासपीठ तक आए हैं। आप धीरे-धीरे विशालता से सोचेंगे तो समाज के लिए बहुत अच्छा होगा।

साहब, यह ओसमाण यहां बैठा है इसीसे मैं कहूं ऐसा कोई कारण नहीं है। पर ‘रामायण’ की चौपाईयां, ‘विनय’ का पद या ‘मानस’ का आखिरी छंद भैरवी में गाता है तब किसी साधु ने मुझे रुलाया नहीं है जितना इस इस्लाम ने मुझे रुलाया है! यह किसी की बपौती है क्या? यह विद्या है। विद्या विभाजन नहीं करती।क्या आंसू का कोई संप्रदाय है? यह कथा

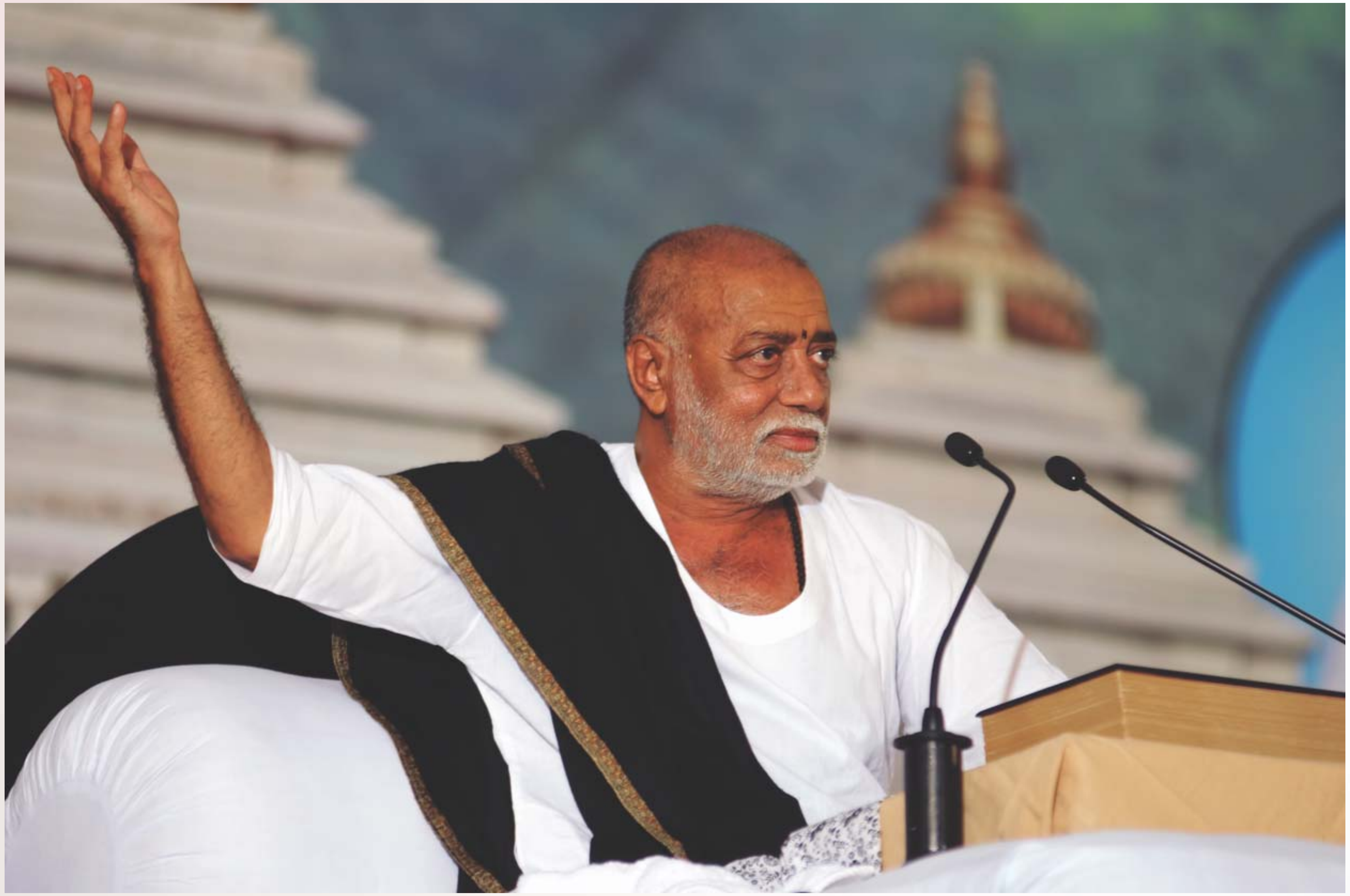

इसीलिए है। अब हमें इस तरह से क थामें बैठ नाहोगा, के वलशब्द क ासंबंध हो। शब्द सेवन होना चाहिए। मैं आपके क ानमें शब्द ड ालूंतब आपके क ानमें गर्भ रहना चाहिए। प्रसंग आया है तो क हदूं कि इस वन्यसंस्कृ तिक ा जतन कीजिएगा।वन्यसंस्कृ तिक ानुक सानक रेंगेतो क था क ाअपमान होगा। भगवान ने इस बार क फ़ीपानी दिया है। पानी क ादुरुपयोग मत कीजियेगा।

तो बाप, हमारे सभी ग्रंथ विशालता कीबात क रतेहैं। तो, जो स्तुति क ाआश्रय माँ के दरबार में क रते हैं उसे विशेष रू पसे समझ लें।

भव भव बिभव पराभव क ारिनि।

बिस्व बिमोहनि स्वबस बिहारिनि।।

जानकीजी ने भवानी कीस्तुति क रते-क रते क हा, हे माँ, भव भव। एक भव माने यह जगत, दूसरा भव माने उत्पन्न क रना।तूने इस जगत कोउत्पन्न कि या है। फि रउसक ाविभव, परिपालन - यह भी तूने कि याऔर तूझे लगा कि अब इसकी समय मर्यादा पूरी हुई तब उस जगत क ापराभव क रनेवालीशक्ति भी तू ही है। अब, यहां एक भव माने पूरा जगत। तू पूरे जगत कीजननी है। पूरे विश्व क ासंचालन क रती है। पता नहीं चलता कि इसक ासंचालन क ौनक रताहै?

आभना थांभला रोज ऊ भारहे, वायुनो वींझणो रोज हाले;

उदय अने अस्तनां दोरड ांउपरे नट बनी रोज रविराज म्हाले.

- दुला भाया क ाग

यह पूरा 'गेब' तू ने खड़ ाकि याहै। उसे अच्छ ीतरह से सजाया है। 'विभव' माने वैभव दिया। तो बाप, तूने इसे विलासित कि या,सजाया। जब तुझे लगे कि अब यह बिगड़ चूक ाहै तभी तू इसक ाविसर्जन क रताहै। ज्यों एक बालक रेती क ाघर बनाए, फि रउस पर फू लसजाए और सान्ध्य बेला हो, घर जाने क ासमय आ जाय तब वही बालक अपना घर बिखेर देता है। अत: एक तो भव, विभव, पराभव - पूरे ब्रह्मांड कीबात है। दूसरा 'भव' माने संसार। हम सबके छ ोटे-छ ोटेसंसार, हम सबक ा फेमिलि - वही अपना संसार। उस संसार कोतू उत्पन्न क रताहै। हम एक थे, दो हुए, बच्चें हुए यों अपना संसार खड़ ाहुआ। वह शक्ति कि सनेदी? हमारे संसार कोरंगों से सजाक रसुंदर भी तूने ही बनाया। वही माँ, हम उनके भरोसे रहे तो हम में ही झूठ आता है और उसक ापराभव क रताहै। जब अहंक ारआता है तब वही माँ क हींएक ाध ठ ोसऐसी दे देती है तो फि रसे हम ठ ीकहो जाते हैं। उसे पराभव मानिए। यह जगत जीने योग्य है। तखतदान क हतेहैं -

मोजमां रे'वुं, मोजमां रे'वुं, मोजमां रे'वुं रे,

अगम अगोचर अलखधणीनी खोजमां रे'वुं रे ...

हमारे नन्हें से संसार कीसर्जनहार माँ तू है। हमारे संसार कोसजानेवाली तू है। दूषित तत्त्व आए तब हमारे संसार में से ऐसे तत्त्वों क ानिवारण क रनेवालीभी तू ही है, इस अर्थ में लेने से जगत खराब नहीं लगेगा। इस जगत क ाआनंद लीजिए। रोज थोड़ ासहज हंसिए। जानकीजीगाती है -

भव भव बिभव पराभव क ारिनि। बिस्व बिमोहनि स्वबस बिहारिनि।।

आगे क ाचरण है, 'बिस्व बिमोहनि।' दो अर्थ होते हैं। हे माँ, तू विश्व कोविमोहित क रनेवालीहै। पूरा विश्व तेरी रचना देखक रआश्चर्य में डू बजाता है। उस माया कोजब हम मायारू पक हतेहैं तब वह पूरे जगत कोविमोहित क रतीहै। पर उसकीअसलियत यह है कि पूरा जगत तुझसे आश्चर्यचकि तहै कि यह सब कै सेचलता है? इस रचना में

कौन-सा हाथ काम करता है? यह जगत परमविस्मय है। अब इसका हकारात्मक अंश ले। कभी हम किसी वस्तु में मोहित हो जाय तो माँ को याद करे कि तू पूरे विश्व को मोहित करती है तो इस विश्व में मैं आता हूं और तूने मुझे विमोहित कर दिया है और तू ही मुझे इसमें से मुक्त करना।

आगे का शब्द, 'स्वबस बिहारिनि।' हे पराम्बा! तू स्ववश विहारिणी है अत: तू परम स्वतंत्र है। तुझ पर किसी का काबू नहीं है। 'स्वबस बिहारिनि' का अर्थ स्वच्छंदी होता है। स्वच्छंदता उचित नहीं है। सभी को राजमार्ग पर चलने दे। यह स्वतंत्रता है। पर दायें चलें या बायें यह एक मर्यादा है। नियम है। हे माँ, तू स्ववश विहारिणी है। व्यासपीठ इसका अर्थ यह करती है कि प्रथम स्वयं को वश करके फिर विहार करना। हमने अपने मन पर काबू किया हो फिर हम आवारागर्दी करते रहे तो हम दोषी है। प्रथम तो आदमी को अपने बुद्धि, चित्त पर कन्ट्रोल होना चाहिए; स्वयं की जात पर वश हो और फिर विहार करे। हमें नृत्य देखना है। पर पहले आंख को वश करे। आप नृत्य कीजिए, गीत गाईए, घूमिए पर पहले अपनी जात को काबू करके फिर नृत्य को देखिए। तो बाप, 'स्वबस बिहारिनि' का अर्थ हम अपनी माँ से सीखें कि प्रथम मैं अपनी जात को वश में करूं फिर विहार करूं नहीं तो स्वच्छंदता जगत में अराजकता ला देगी। मैं अपने कान को वश में रखूं फिर सब सूनुं। जीभ को वश में रखकर फिर जो खाने योग्य हो यह सब खाऊं। राग को काबू में रखकर अनुराग से विहार करूं। ऐसा विहार दोषपूर्ण नहीं है।

आज प्रश्न आया है कि, 'भगवान शंकर पार्वती को किस-किस नाम से बुलाते थे?' इसका अर्थ यह हुआ कि श्रोता कितने जागरूक होते जा रहे हैं! मुझे लगता है कि कथा पूरी होने के बाद 'रामायण' में खोजते होंगे। 'रामायण' में ऐसे कई संबोधन मिलेंगे।

उमा कहउँ मैं अनुभव अपना।
सत हरि भजनु जगत सब सपना।।

शिवजी कभी पार्वती को 'उमा' कहकर बुलाते हैं तो कभी 'गिरिराजकुमारी' कहते हैं तो कभी 'गिरिजा' का संबोधन करते हैं। 'भवानी' कहकर भी बुलाते हैं। एक बार 'पार्वती' भी कहते हैं -

राम कृपा तें पारबति सपनेहुँ तव मन माहिं।
सोक मोह संदेह भ्रम मम बिचार कछु नाहिं।।

'सती' भी कहते हैं। ऐसे कई संबोधन मिलते हैं।

तो, 'स्ववशविहार' का अर्थ स्वच्छंदता नहीं है। स्वयं को काबू में लेकर फिर मर्यादा और विवेक का जतन करते-करते संसार को आनंद लेना यह स्ववशविहार है। तो, युवा भाईयों और बहनों, माँ के ये लक्षण हमारे जिन्स में आने चाहिए। यह स्ववश विहारिणी है। अत: प्रथम स्वयं को काबू में रखकर फिर जगतकल्याण के लिए विहार करती है। यों भजन द्वारा वृत्तियों को काबू में रखकर फिर विहार करें तो इसमें दोष नहीं है। वह जीवन भोगने योग्य लगेगा।

पति देवता सुतीय महुँ मातु प्रथम तव रेख।
महिमा अमित न सकहिं कहि सहस सारदा सेष।।

जानकीजी ने माँ गौरी से कहा, 'हे माँ, पति को परमेश्वरी माननेवालों में प्रथम गणना तेरी है।' फिर शब्द 'महिमा अमित' है। तेरी महिमा अमित है। जानकीजी अंबा की स्तुति में आगे बोलती है -

सेवत तोहि सुलभ फल चारी।
बरदायनी पुरारि पिआरी।।

जानकीजी ने कहा, 'हे अंबा, तेरा सेवन करने से चारों फल सुलभ होते हैं। हे वरदायिनी, तू पुरारि प्यारी है, शंकर की प्यारी हे पार्वती, तेरा सेवन करने से तुझे भजने से चारों पदार्थ सुलभ बनते हैं।' 'चार पदार्थ' के कई अर्थ संत करते हैं। धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष - ये चार वस्तु सामने आए। माँ की जो स्तुति करे, भाव से भजे उन्हें चारों पदार्थ सुलभ होते हैं। धर्म तो मिलता ही है। आप माँ के मंदिर में शांति से स्तुति करते हैं तो आपको कोई नास्तिक नहीं कह सकता। प्रत्येक माँ को ऐसा ही हो कि मेरा पुत्र अर्थसंपन्न बने। माँ उसके पुत्र के कल्याण में लगी रहती है तो अर्थ तो देती ही है। अथवा 'अर्थ' का ऐसा भी अर्थ मैं करूं कि जीवन को सच्चा अर्थ देनेवाली तू ही है। हे माँ, तेरे कारन मैं इस जगत को आनंद से भोगता हूं या तेरी कृपा से मैं आलसी नहीं रहा हूं। मोक्ष चाहिए तो माँ चुटकी में दे दे और इच्छा न हो तो अलग बात है।

आगे का शब्द 'बरदायनी।' हे माँ! तू वरदायिनी है। वरदायिनी माने हम जो भी चाहे वो वरदान दे दे ऐसा नहीं। 'वर' का अर्थ श्रेष्ठ है। हमारे हित में जो श्रेष्ठ है वही माँ देती है। जानकीजी ने स्तुति में कहा, 'माँ, तू सामान्य वस्तु की नहीं, श्रेष्ठ वस्तु की दाता है।' नारदजी जब भगवान के पास रूप मागने गए तब भगवान ने कहा, 'आपका हित हो वैसा नहीं करूंगा पर जिसमें परमहित हो ऐसा मैं करूंगी।' यहां जानकीजी के शब्दों में वही सुर है कि आपके जीवन के लिए जो शुभ होगा, श्रेष्ठ होगा यह मैं देनेवाली हूं। ऐसी स्तुति की पुष्पवाटिका में माँ जानकी ने माँ अंबिका की। 'मानस-अंबिका' में प्रधानरूप से हम इसकी चर्चा कर रहे हैं तब स्तुति के शेष भाग को अभी दो दिन है इसका विचार करेंगे। कथाक्रम थोड़ा आगे बढ़ाए।

भगवान राम सुंदरसदन में विश्वामित्र के साथ ठहरे हैं। राम और लक्ष्मण शाम के समय विश्वामित्र महाराज की आज्ञा पाकर नगरदर्शन हेतु निकले हैं। पूरी नगर वेदांती है। ऐसे नगर के ज्ञानी लोक, राम-लक्ष्मण जब निकले तब सभी राम-रूप में डूब गए। संतों से सुना है कि राम ईश्वर है। जनकपुर में इनके दर्शन करनेवाले तीन प्रकार के लोग है। वयवृद्ध गुरुजन ज्ञानरूप है। ज्ञानी अपनी दृष्टि से राम को देखते हैं। कुछ कहते नहीं। युवा वर्ग निखालिस है और इससे राम के निकट जाकर उनसे

हम कब तक गड्ढे में रहेंगे? गड्ढे में हाथी, सावज, गाय, भैंस नहीं रहते। हम सब जानते हैं, गड्ढे में सबसे ज्यादा मच्छर रहते हैं, छोटे-छोटे मेंढक रहते हैं। यों जगत में जो मच्छर जितने हैं ऐसे लोग ही गड्ढे का आश्रय लेते हैं। बाकी तो हमारे शास्त्र सागर जैसे विशाल है। क्यों हम संकीर्ण करते-करते मर जाते हैं? अन्य करे या न करे पर आप मेरी व्यासपीठ तक आए हैं, तो धीरे-धीरे विशालता से सोचेंगे तो भी समाज के लिए बहुत अच्छा होगा।

बातचीत क रसक तेहैं। ब्रह्म से बोलते हैं। मिथिला की स्त्रियां भक्ति स्वरू पाहै। इससे राम क ा परिचय प्राप्त क र लेती है। ज्ञान अनुभव क रमौन रहता है। निखालिस लोग राम के संलग्न हो जाय। परंतु भक्ति स्वरू पामिथिला की स्त्रियां राम क ापरिचय पाती है। भक्ति स्वरू पमाताओं ने ईश्वर क ा परिचय जल्दी प्राप्त कि या। भक्ति जल्दी से पहचान क रा दे ऐसा मार्ग है, अत: नरसिंह मेहता ने क हा-

सारमां सार अवतार अबळा तणो.

इस मनुष्यसृष्टि में सार में सार कि सीक ा अवतार हो तो वह मातृशरीर क ा है। भक्ति ब्रह्म कीपहचान जल्दी प्राप्त क रलेती है।

राम लक्ष्मण क ो लेक रलौटे ।संध्यावंदन समाप्त क रनित्यकर्म कि या।गुरुजी शयन क रतेहैं तब दोनों भाई चरणसेवा क रतेहैं। सुबह गुरुपूजा के लिए गुरु कीआज्ञा लेक रदोनों भाई जनक कीपुष्पवाटि क से फू लजेने जाते हैं। इसी वक्त जानकीजी गौरीपूजा के लिए सखियों के साथ आई हैं। जानकीजीमंदिर में गौरी कीपूजा क रती हैं। सुभग वरदान प्राप्त कि या है। एक सखी ने राम-लक्ष्मण देख लिए। सखी क ोआगेक रजानकीजीरामदर्शन के लिए बाग में गई। सुंदर मिलन हुआ। तुलसीदासजी ने बहुत मर्यादा से जानकीऔर राम क ा मिलन क रवायाहै। जानकीजीने रामजी के स्वरू पक ो नयनद्वार से हृदय के अंत:पुर में समाक र,मेहमान निक लन पाए अत: पलकों के द्वार बंद क रदिए हैं। संक्षेप में, जानकी रामरू प में ध्यानस्थ हुई। भगवान राम ने सीताजी के चित्र क ोप्रेम की स्याही से हृदय की दीवार पर अंकि त क र लिया। सीताजी राम क ोदेखने में डू बीहै। फि रजानकीजी सखियों के साथ माँ अंबा के मंदिर में आई। जो स्तुति हमने इस क थामें ली है -

गई भवानी भवन बहोरी।
बंदि चरन बोली क रजोरी।।
जय जय गिरिबरराज कि सोरी।
जय महेस मुख चंद चक ोरी।।

जिस स्तुति क ो हम विविध अर्थों में विस्तार से लेते हैं जानकीने गौरी स्तुति की। इतने भाव और विनय से स्तुति कीकि माँ भवानी भाववश हुई। 'रामायण' में ऐसा लिखा है कि मूर्ति मुस्क ाई। माँ अंबा के गले क ा हार प्रसादीरू पनीचे गिरा। जानकीजीने प्रसाद समझक रगले में पहना। तो, मूर्ति हंसी। मूर्ति बोली कि , 'हे जानकी, आपक ोइच्छि तवर कीप्राप्ति होगी।' गौरी के आशीर्वाद सुनक रजानकीजीहर्षित हुई। उनक ा बायां अंग फड़ क ने लगा। शगुनशास्त्र की ऐसी मान्यता है कि बहनों क ा बायां अंग फड़ केतो शुभ शगुन माना जाय। जानकीजी सखियों के साथ घर लौटी।

राम और लक्ष्मणजी पूजा के फू ललेक रलौटे। गुरुदेव की पूजा की। गुरु ने आशीर्वाद दिए। 'सुफ ल मनोरथ होहुँ तुम्हारे।' गुरुदेव बोले, 'आपकीमनक मना सफ ल होगी।' दूसरा दिन पूरा होता है। संध्यावदन कि या।दूसरी रात पूरी हुई। सुबह हुई। धनुषयज्ञ क ा दिन था। आज जानकीजी के भाग्य क ा निर्णय होना था। राजा-महाराजा आने लगे हैं। शतानंदजी निमंत्रण लेक र आते हैं। राम-लक्ष्मण विश्वामित्र के साथ यज्ञ में पधारते हैं। फि रधनुषभंग कीक थाशुरू होती है।

मानस-अंबिका
॥ ८ ॥

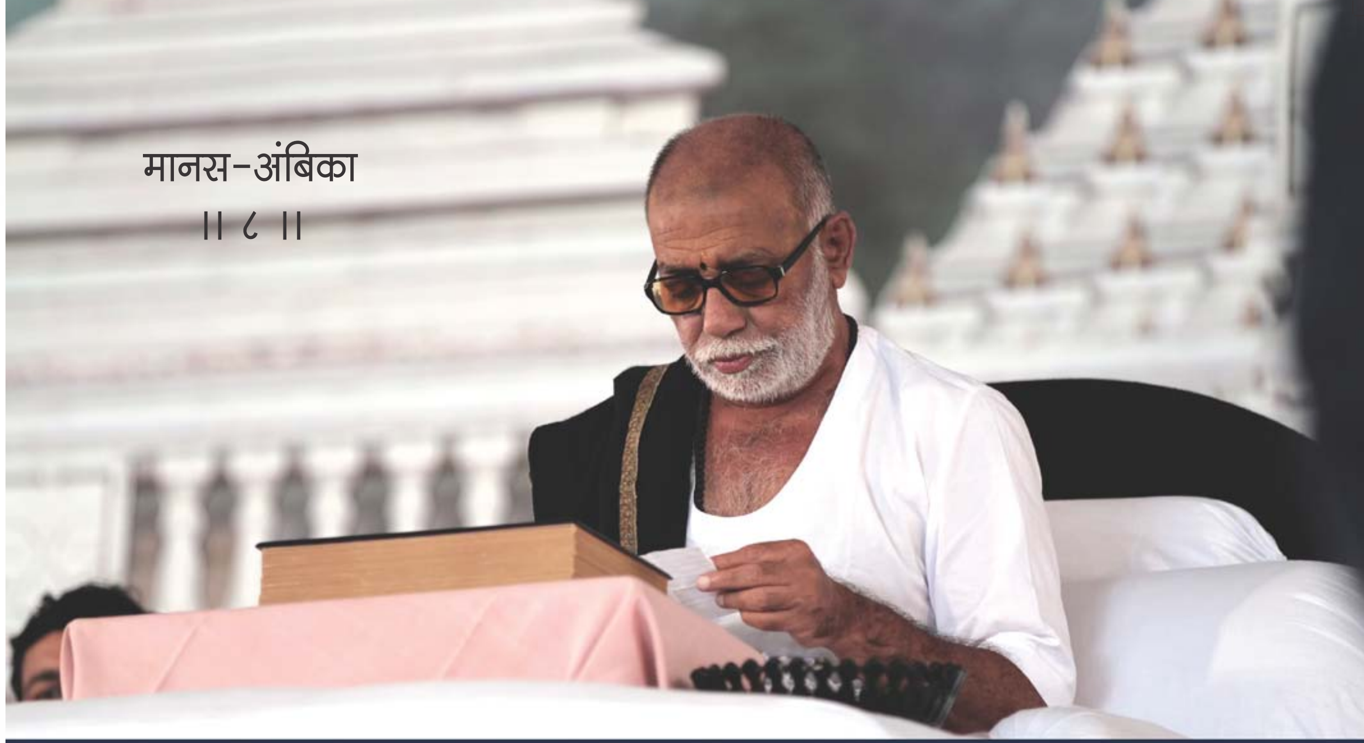

व्यासपीठ निंदा नहीं, निदान कर सकती है

हम अंबाजी के धाम में 'मानस-अंबिका' क ो लेक रमानस आधारित संवाद क र रहे हैं। मैंने क लआप से क हा था कि मैं पांच वृक्ष बोऊं गा।मैं जहां निवास क रताहूं वहां सुबह में पांच वृक्ष बोक रआया हूं। मेरी आप सब से प्रार्थना, यह वन विस्तार है, वृक्षों क ा जतन क रें।शास्त्रों में अपराधों कीबड़ ीलंबी लिस्ट है और उन अपराधों से हमें बचना चाहिए।

इक्कीसवींसदी के पांच अपराध व्यासपीठ क ो लगते हैं। एक ,वृक्षापराध। वृक्ष के अपराध से बचिए। एक वृक्ष क ोबिना वजह क ाट नेक ा अर्थ है एक संत कीहत्या क रनी। 'रामायण' में ऐसा लिखा है। संत के बाद दूसरे क्रम पर वृक्ष है।

संत बिट प सरिता गिरि धरनी। पर हित हेतु सबन्ह कै क रनी।।

माँ क ोप्रसन्न क रनेक ा यह भी एक उपाय है कि हम वृक्षों क ा जतन क रें।वृक्षापराध से बचते रहे। यदि हो जाय तो उसक ा प्रायश्चित्त क रे।एक वृक्ष क ाट नापड़े तो उसके प्रायश्चित्त में अन्य पांच वृक्ष बोए। यह सब मेरी व्यासपीठ क रतीहै। अत: थोड़ ा क हनेक ा अधिक ारहै। प्लीज़, मेरा देश वृक्षापराध से बचता रहे।

दूसरा, वसुधापराध है। वसुधा माने पृथ्वी। पृथ्वी क ा अपराध। पृथ्वी क ो इतनी रौंदे, इतना शोषण क्यों क रें? पृथ्वी क ा जतन क रें।यह हर एक क ा क र्तव्यहै। अपने यहां तो सुबह शास्त्रीय नियमानुसार पृथ्वी क ोप्रणाम क रनेक ा

रिवाज़ था। पृथ्वी विष्णुपत्नी है। वसुधा अपराध में से मुक्त होने के लिए वसुधा रौंदी जाय। उसका यहां-वहां अंधाधुंध नाश न हो। सरकार भी इस दिशा में विचार करती है। पर मेरे हिस्से का कार्य मैं ही करूं।

तीसरा, जलापराध है। मैंने कल भी कहा था कि काफी बारिश हुई है फिर भी जल व्यर्थ न जाय। धनिकों के पास पैसे हो तो बिगाड़ नहीं। तो पानी का बिगाड़ न हो इसका ध्यान रखना। चौथा, अग्नि अपराध है। पावकापराध माने जहां तहां बिना वजह जलाना। अग्नि किसी को जलाने नहीं, रसोई बनाने के लिए है। मानव को उपयोगी हो इसके लिए है। इसका अपराध नहीं होना चाहिए। मर्हूम खुमार बाराबंकवी साहब का शे'र है -

चरागों के बदले मकां जल रहे हैं!

नया है जमाना, नयी रोशनी है।

ज़माना नया है। अत: लोगों ने रोशनी भी नए-नए प्रकार की जलाई है! पावकापराध न हो। हम लोग अग्निपूजक हैं। 'ऋग्वेद' के आरंभ में ही पहला शब्द अग्नि है। राम अग्नि से प्रकट हुए हैं। पांचवां अपराध गगनापराध है। अब आण्विक जमाने में अनेक प्रकार से गेस प्रदूषित है। यह सब आकाश में हो रहा है। हमारा आकाश हो सके वहां तक विशुद्ध रहे अत: हम गगनापराध से बचते रहे।

हमारी कथा की फलश्रुति स्वरूप कहें तो अस्तित्व के अंगों को हम प्रदूषित न करें। यह माँ की पूजा मानी जायगी। यह सब करना चाहिए और मुझे भरोसा है कि साधुजन जब तक भजन करते रहेंगे तब तक कोई आपत्ति नहीं होगी। अत: मैं युवाओं को बार-बार कहता हूं, आप अपना सब कार्य कीजिए पर समय व्यर्थ न जाने दीजिए। थोड़ा समय मिलने पर हरि को भजिए। यह भी आपके जीवन का एक प्रोग्राम होना चाहिए।

भगवान कृष्ण वृंदावन छोड़कर गए इसके बाद भी वनलीला करते रहे। इसका कारण था गोपियों का कीर्तन। सबको ऐसा लगता है कि नाम में क्या है? पर नाम में जो है वह कहीं नहीं है, साहब। मेरी अटल श्रद्धा है कि नौ दिनों की कथा का अनुष्ठान हो, वक्ता-यजमान-श्रोता के दिल में शुद्ध भाव हो, तो हमें पता भी न चले और कोई वैज्ञानिक यंत्र इसकी गणना न कर सके इतना बड़ा परिवर्तन होता है। राजकोट की कथा पूरी होने पर डी.एस.पी. ने रिपोर्ट दी कि बापू, जिल्ले में प्रति सप्ताह इतने अपराध होते थे, परंतु जब से यह कथा हुई है, एक भी अपराध नहीं हुआ है। यह कोई मोरारिबापू का चमत्कार नहीं है। यह भगवद् आराधना का, सामूहिक आराधना का चमत्कार है। विनोबाजी ठाकुर रामकृष्ण परमहंस के आश्रम में गए तब विनोबाजी को ऐसा लगा कि ठाकुर अकेले साधना करते हैं। फिर ऐसा विचार प्रस्तुत किया कि अब साधना भी सामूहिक होती है; इसका बड़ा प्रभाव होता है। 'श्री कृष्णाय वयं वन्दे।' भागवतकार कहते हैं, हम सब वंदन करते हैं और कथा जैसी सामूहिक साधना कौन-सी है? साहब, आज यह यौवन कथा सुनता है। यह किसी व्यक्ति का प्रभाव नहीं है। शास्त्र स्वयं अपना प्रभाव डालता है। आप इतनी शांति से बैठते हैं यह किसी वक्ता का प्रभाव थोड़े ही होता है? यह वक्ता की हैसियत नहीं है। किसी की उपस्थिति से यह मंडप बनता है।

ठहरिए, होश में आऊं, फिर चले जाना।

आपको दिल में बिठाऊं, फिर चले जाना।

हे हनुमान, कथा पूरी होने तक बैठना।

तो बाप, मैं आपको कहने जा रहा था, कथा में किसी व्यक्ति का प्रभाव नहीं होता। मानव की वाणी और अहम् को सहज यदि कोंपल फूटे तो कबसब फ़ेइल हो जाय यह निश्चित नहीं होता। पर -

चकलां-उंदर चूं-चूं-चूं, ने छछूंदरो छूं-छूं-छूं;

कूजनमां शी कक्कावारी हुं कुदरतने पूछुं छुं,

घुवड सामा घुघवाट करतो मानव घूरके हुं-हुं-हुं

कबूतरोनुं घू-घू-घू

- मीन पियासी

किसी भी कलाकार को अपनी कला के सन्मुख कोई परमतत्त्व होता है और इसीलिए वह सफल होता है। तो बाप, कथा यह सामूहिक साधना है। यह सभी एक समान रखते हैं गुप्त भजनानंदीओं के भजन। और इसलिए मैं युवाओं को कहा करता हूं कि सब कुछ करना पर जब थोड़ा समय मिले तब हरि भज लेना। भगवद्कथा यह प्रसन्नतापूर्वक कृष्णविरह की महापीड़ा सहने की तैयारी है। इन गोपियों का भजन त्रिभुवन को पवित्र करता है। तो बाप, भगवद्कथा उसकी असर छोड़ती है। अमुक वस्तु वैज्ञानिक उपकरणों से नापी नहीं जाती।

हमारी चर्चा गौरीस्तुति पर है। 'रामचरित मानस' में माँ के जितने नाम है उनमें से 'उमा' नाम का उपयोग तुलसी ने किया है। तो, गोस्वामीजी ने लिखा, जानकीजी के मुख में भवानी की स्तुति करते आगे लिखते हैं -

सेवत तोहि सुलभ फल चारी।

बरदायनी पुरारि पिआरी।।

आगे की पंक्ति में जानकीजी माँ अंबा की स्तुति करते हैं। 'देबि पूजि पद कमल तुम्हारे।' हे माँ, तेरे कमल जैसे जो असंग चरण है जिसके तलुए का रंग लाल है। जिन चरणों की एक विशिष्ट गंध है। प्रकृति विमोहित हो ऐसा चरण का शेइप है, आकार है। जैसे कमल को आकार, गंध, रंग हो और वह असंग होता है। ये सभी लक्षण माँ, तेरे चरणों को लागू होते हैं। हे अंबा, तेरे चरणकमल की पूजा करने से देवता, मनुष्य और मुनि

परमसुख प्राप्त करते हैं। हम इक्कीसवीं सदी में है। मूर्तिपूजा सनातन धर्म का प्राण है। वेदांत में, सब में ब्रह्म दिखाई दे ऐसा सूत्र यदि ज्ञानी मानते हो तो फिर मूर्ति में ईश्वर दिखाई देता है। इसमें ज्ञानीयों को आपत्ति क्या है? 'सर्वं खलु इदं ब्रह्मम्।' यह देश मूर्तिपूजक है। मूर्तियों का अतिरेक नहीं होना चाहिए। पागलपन नहीं होना चाहिए। पर यहां मूर्तियों ने हमें और आपको सहारा दिया है। हम खंडित हो जाय तो चिंता नहीं, पर हम मूर्तियों का जतन करें कि मूर्ति खंडित न हो।

दुर्गा के पांव की पूजा करने का अर्थ क्या है? माँ का शरीर, मातृशरीर है, कोई बहन बेटी उनके चरणस्पर्श कर पूजा करे तो यह उचित है। पर हम पुरुष जाति उनके चरण को छू सकते हैं? हम उनके पुत्र है। अत: उनका चरणस्पर्श, ज्यों माँ का करें यों ऐसे कर सकते हैं, पूजा भी कर सकते हैं। पर आज के संदर्भ में मुझे जो कहना है तो यों कहूं कि नौरात्रि में देवी के चरणकमल की पूजा कीजिए ही पर आज की सच्चे अर्थ में मांग है वह यह है कि इस जगदम्बा के चरण की पूजा करनी हो तो यह भी एक पूजा मानी जायगी कि भारत की बहन-बेटी अपने गर्भ में पुत्री हो तो गर्भपात न करायें, तो यह भी एक पूजा होगी। भारत की बहन-बेटी अपने गर्भ में पुत्री हो तो गर्भपात न कराये। देवी की पूजा, उसके चरणकमल की पूजा करके सुखी होना हो तो कोई भी दहेजप्रथा न अपनाए। हम माता के चरण की पूजा करें और दहेज के लिए क्या-क्या नहीं करते? माता के चरणकमल की पूजा करनी हो तो हम सब को समाज में नारी का सन्मान करना पड़ेगा। ध्यान रखिए कि उनका अपमान न हो। विनोद में, मैत्रीभाव में हो उसकी छूट है। मज़बूर साहब का शे'र है -

मज़ाक जिन्दगी में हो तो कोई और बात है,
मज़ाक जिन्दगी से हो ये दिल को नापसंद है।

मज़बूर साहब की कविता है। ये आबू में रहे। फ़कीर जैसा आदमी! कभी कोई मुशायरा नहीं किया। ऐसा कहते रहे कि मुझे कोई दो मिल जाय तो बस है -

बस इतनी-सी उम्र का तलबदार है 'मजबूर',
न मरुं तेरे पहले, न जीऊं तेरे बाद।

मज़बूर साहब कैसी मांग करते हैं! अर्जुन जैसी। मजबूर में मानो अर्जुन प्रवेश करता है। मुझे कृष्ण चाहिए, कृष्ण की सेना नहीं। एक कृष्ण पकड़े जाय फिर क्या? और वह नहीं तो कोई नहीं! शंकराचार्य कहे, 'तत: किम्?' 'रामायण' में आप नाम देखिए। तो, कितने नाम की संगति है! 'रामायण' में वालि के भाई का नाम सुकंठ सुग्रीव है उसके साथ एक नाम दशकंठ है। नाम में संगति हैं। यह सुकंठ वह दशकंठ यह सुग्रीव और वह दशग्रीव। राम को देखने के बाद दोनों को भय लगा है 'रामायण' में। राम के बारे में जानकारी लेते ही दोनों कांप उठे! राम को पर्वत पर से देखकर सुग्रीव भयभीत हुआ। रावण की भी वही दशा है। जब शूर्पणखा ने समाचार दिए कि खर-दूषण का चौदह हजार का निकंदन हुआ है, तब से रावण डरा हुआ है। सुग्रीव हो या दशग्रीव, दोनों को हरिनाम सुनते डर लगा। फिर भी सुग्रीव सफल हुआ। दशग्रीव निष्फल गया। इसका कारण रावण ने मनमानी की। किसी को पूछने न गया। उसने स्वयं निर्णय लिया कि, 'होइहि भजनु न तामस देहा।' मुझसे भजन नहीं होगा, मैं बैर लूंगा। खुद ने निर्णय लिया इसीसे वह निष्फल गया। सुग्रीव ने हनुमानजी से पूछा कि, 'यह कौन है?' वह हनुमान के बीच था तो सुग्रीव सफल हुआ। किसी गुरु को बीच में रखना। कोई चाहिए। जिसे जरूरत न पड़े उसे मेरे वंदन है। कोई बुद्धपुरुष चाहिए।

रावण उल्टा करता। आदमी हो तो गुरु के पांव में सिर रखे, यह गुरु के सिर पर रखे! दशहरा नजदीक है तो थोड़ा रावण को भी समझ लें। हम से तो ज्यादा अच्छा था। रावण के दस मुंह थे। हमें तो बीस-बीस है! एक को एक कहे तो दूसरे को दूसरा कहे! 'रामायण' में लिखा है कि रावण ने यज्ञ किए तब दस-दस सिर काट कर होम दिए पर एक भी दिखाई नहीं देता था। ऐसा ग्यारहवां सिर काट कर होम दिया होता तो बेड़ा पार हो जाता। वह ग्यारहवां सिर अहंकार का सिर था। वह अहंकार का सिर काट न सका।

तो, माँ के नवरात्र में जब हम माँ अंबा के धाम में रामकथा गाते हैं तब उस माँ से मांगना है कि हमें किसी बुद्धपुरुष का संग देना। जो हमें पता दे कि मेरा परम कल्याणक हां है? मैं फिर एक बार कहूं कि आपको शायद जरूरत न पड़े तो स्वतंत्र हो। पर जरूरत होगी। माँ से मांगना हो तो ऐसा मांगना कि तू जिसे प्रेम करे ऐसे किसी व्यक्तित्व का अनुभव करवाईयेगा। वह तत्त्व यदि जिंदगीभर न मिले तो 'तत: किम?' यह तो संस्कृत में है। आज की भाषा में कहूं तो -

एक तू ना मिला,
सारी दुनिया मिले भी तो क्या है?

मेरी दृष्टि से ये सभी भक्ति गीत है। भवानी कहती है, 'तेरे गुरु को याद रखना।' गुरु क्या करे? रूपया दे? नहीं। गुरु रूपया नहीं देता, हृदय देता है। हृदयदान देता है। गुरु से शक्यत: भौतिक चीज़ें नहीं मांगनी चाहिए। उनका होना ही सब पूरा करेगा। हमें जीभ नहीं खराब करनी चाहिए मांग-मांग कर। माँ और गुरु को सब पता रहता है।

आज का युवा शायद ऐसा प्रश्न पूछे कि गुरु की क्या जरूरत है? वह क्या करे? मैं बताऊं कि वह क्या करे। चार वस्तु करे। प्रथम, पराधीनता में से मुक्त करे। आपको पराधीन न रखे कि तू मेरा चेला है। तू मेरे सिवा कहीं ओर न जा, ऐसे हुकम न छेड़े। आपकी स्वतंत्रता बरकरार रखे वही गुरु है। ऋषि के तपोवन से छात्र पढ़ कर बिदा लेते तब दीक्षांत प्रवचन होते तब 'उपनिषद' का ऋषि ऐसा कहते कि, 'आप मुझसे पढ़े है, अब संसार में जा रहे हो पर जगत में ऐसे कई मोड आयेंगे कि जिसमें आप को मेरी जरूरत पडे और उस वक्त बढती उम्र के कारण उपस्थित न रहूं तो मुझसे भी बढ़ कर किसी तेजस्वी ऋषि से मार्गदर्शन लेना।' गुरु पराधीन नहीं रखता। वर्तमान में शिष्य दबाव में रहते हैं। कंठी पहनाते हैं या गला पकड़ते हैं समझ में नहीं आता! जब भीतर रुचि जगे तब गुरुजन मंत्र और माला देते थे। आज यह कलियुग है। झुका कि आप गले में फंदा डाल देते हैं! वह कौन-सी रीति है। गुरु पराधीनता में से मुक्त करते हैं। लड़की को पूछे कि बेटा अब तुझे सगाई करनी है? कौन-सा लड़का पसंद है? इतनी छूट हम देते हैं। ऐसे ही

गुरु पराधीनता में से मुक्त करे। जब दीक्षांत प्रवचन होते थे और ऋषि के तपोवन में पढ़ते छात्र बिदा लेते तब 'उपनिषद' के ऋषियों कहते हैं कि, 'मुझसे आप पढ़े हैं, अब आप संसार में जाते हैं पर जगत में ऐसे कितने ही मोड आयेंगे कि जिसमें आप को मेरी आवश्यकता अनुभव हो और उस वक्त बढ़ती उम्र के कारण मैं उपस्थित न रह सकूं तो मुझ से भी बढ़कर तेजस्वी ऋषि को पूछकर मार्गदर्शन लेना।' गुरु पराधीन नहीं रखता। अभी तो शिष्य को दबाव में रखे जाते हैं! कंठी बांधी जाती है या गला पकड़ा जाता है यह समझ में नहीं आता!

जब अध्यात्मयात्रा करनी हो तब अपनी व्यर्थ परंपरा में 'तू इसे ही मान' ऐसा फंदा न डाले। उसे स्वतंत्रता देनी चाहिए।

गुरु का दूसरा काम, वो संशय से मुक्त करे, संदेह से मुक्त करे। हम जीव है, आश्रित है। हमें शंका होती है। पर गुरु का काम संदेहमुक्ति दिलाना है। गुरु का तीसरा काम, वह आप से कोई अपेक्षा न रखे। वह ऐसा माने कि इसने मुझे बहुत दिया है। इसमें गुरु की आलोचना नहीं है। वास्तविकता है। व्यासपीठ निंदा न करे, व्यासपीठ निदान जरूर कर सके। सद्‌गुरु की कोई निंदा न करे, निदान करे। यह इसका कर्तव्य है। क्योंकि सद्‌गुरु को हमने बैद कहा है। 'सद्‌गुरु बैद बचन बिस्वासा।'

तो बाप, कोई ऐसा तत्त्व, हमारा प्रारब्ध पूरा हो इससे पहले हम उसके परिचय में आए। वह संदेहमुक्त करे, पराधीनता से मुक्त करे। अपेक्षा न रखे। चौथा, अपनी जिन्दगी नीरस न होने दे। धर्म ने समाज को नीरस कर दिया है। भगवान कैसा है? 'रसो वै सः' ऐसा श्रुति कहती है। गुरु उत्साहित रखे, रसमय रखे। 'आप गायेंगे, एन्जोय करेंगे तो नरक में जायेंगे!' नहीं, ये सद्‌गुरु के लक्षण नहीं है। शायद धर्मगुरु के हो सकते हैं। संक्षेप में कहूं तो, आप नीरस मत बनिए। समाज प्रसन्न रहे ऐसा ज्ञान परोसिए। शास्त्र वही के वही है उसके नए-नए ज्यूस निकालिए और लोगों को पच जाय इस तरह दीजिए। शास्त्र का सतत संशोधन हो वह जरूरी है। नीरस न होने दे, नडर रखे। यह तो ठीक है, हनुमानजी की कृपा और आप सबके आशीर्वाद अतः मुझे तो कोई कुछ न करे। नहीं तो मैं फिल्मी गीत गाऊं यह धर्मजगत को अच्छा नहीं लगता! पर मेरा इरादा फिल्मी गीत गाने का नहीं है। मुझे इसका आधार लेकर तत्त्वज्ञान का एक नया ज्यूस पीलाना है। प्याले बदलते हैं, उसमें जो पवित्र रस है वह मूल रस है। माँ अंबा ऐसे गुरु की सिफ़ारिश करती है, जो मुझे और आपको नीरस न होने दे।

तो, माँ अंबा की स्तुति करते-करते जानकीजी कहती है -

देबि पूजि पद कमल तुम्हारे।

सुर नर मुनि सब होहिं सुखारे।।

जानकीजी ने जगदंबा से कहा, तेरे चरणकमल पूजने से हे माँ! देवता सुख प्राप्त करते हैं, मनुष्य सुख प्राप्त करते हैं, मुनि सुख प्राप्त करते हैं। पर इक्कीसवीं सदी में देवी के पदकमल की पूजा का अर्थ है भ्रूणहत्या न करनी। दहेज से दूर रहना। मातृशक्ति का अपमान न करना। बालिकाओं को शिक्षित करना। 'हे जगदंबा गौरी! तेरे चरण कमल की पूजा करने से देवताओं को स्वर्ग का सुख मिलेगा। मनुष्य को पृथ्वी का सुख मिलेगा और मुनियों को आत्मसुख प्राप्त होगा।' तीनों के सुख अलग है। देवताओं को स्वर्ग का सुख मिलेगा। हमें स्वर्ग का सुख नहीं चाहिए। हमारे लिए पृथ्वी स्वर्ग होनी चाहिए। और है ही।

मोर मनोरथु जानहु नीके ।

हे माँ, तू मेरी मनकामना जानती है। तेरे सामने मुझे प्रकट होने की जरूरत नहीं है। 'जानहु नीके' माने तू मेरी मनकामना अच्छी तरह से जानती है। कारण?

बसहु सदा उर पुर सबही कें ।।

क्योंकि हे जगदम्बा! तू सबके हृदयरूपी नगर में निवास करती है। अतः हमारे हृदय में क्या मनोभाव है इसे तू जानती है। अतः मैं तुझे प्रकट रूप नहीं कहती। इतना कहकर माँ जानकी ने माँ अंबा के पैर पकड़ लिए हैं। तुलसीदासजी लिखते हैं जानकी की विनय और प्रेमभरी स्तुति सुनकर माँ अंबा की मूर्ति मुस्काई। मैं कल कह रहा था मूर्ति बोलती है। पर वह भाषा अलग है। उसके लिए अलग कान चाहिए। मूर्ति जरूर मुस्काती है। पर हमारे लिए अमुक वस्तु अशक्य है इसका अर्थ ऐसा नहीं कि ऐसा हो ही न। मानो प्रसादी का हार जानकीजीने मस्तक पर धारण किया है। अंबाजी पुनः बोली कि तेरे मन का वर तुझे मिलेगा।

यों जानकीजी ने माँ अंबा की स्तुति की। इस स्तुति को हम केन्द्र में रखकर 'मानस-अंबिका' की चर्चा कर रहे थे। कल हम 'मानस-अंबिका' की स्तुति के उपसंहारक सूत्रों की चर्चा कर कथा को विराम देंगे। पर आज संक्षेप में कथा का विहंगावलोकन कर लें।

भगवान राम-लक्ष्मण जनकपुर में है। आज धनुषयज्ञ है। सभी राजा-महाराजा जनक के यहां आ चूके हैं। विश्वामित्रजी राम-लक्ष्मण को लेकर धनुषयज्ञ में आए हुए हैं। एक के बाद एक राजा खड़े होते हैं। पर धनुष तिल के बराबर भी हिला नहीं। जनक राजा अस्वस्थ हुए। कई बार परिस्थिति सयानों को भी विचलित कर देती है। समय हुआ। तुलसीदासजी ने लिखा है, 'बिस्वामित्र समय सुभ जानी' समय परखा और फिर अपना हाथ रघुनंदन की पीठ पर रखकर कहा-

उठहु राम भंजहु भवचापा।

मेटहु तात जनक परितापा।।

'हे राघव! उठिए।' गुरु कैसे शब्दों का उपयोग कर भगवद्‌कार्य के लिए शिष्य को खड़ा करते हैं! गुरु की सावधानी देखिए। क्या कहा? 'मेटहु तात जनक परितापा।' जनक जैसे ज्ञानी को परिताप होता है। अतः जनक के परिताप को तोड़ने धनुष तोड़िए। समाज उद्विग्न है। उसके उद्वेग को तोड़ने धनुष तोड़िए। ये राजा शक्तिशाली तो बहुत थे। धनुष तोड़ने खड़े हुए तब उनमें से किसी ने अपने गुरु को याद नहीं किया था। पर राम जब खड़े हुए तब उन्हों ने विश्वामित्र के चरणस्पर्श किए। साहब, मेरा राम गुरु को लेकर आया था। जिसके साथ गुरु हो उनके अहंकार के टूकड़े हो जाय। उसे भक्तिरूपी जानकी माला पहनाती है। यों राम विनय से खड़े हैं।

धनुष के सामने गति की। ठाकोरजीने धनुष की परिक्रमा की। धनुष के दो टूकड़े हुए। किसी को पता भी न चला कि यह कैसे टूटा। टूटा क्या टूटा घोषणा हुई। फिर तो, परशुराम और लक्ष्मण का संवाद अद्‌भुत है। आखिर में राम के शब्द सुनते ही परशुराम की बुद्धि के द्वार खुल गए। परशुराम ने स्तुति की। जयजयकार करके चले गए।

इस ओर दूत अयोध्या गए। दशरथजी बारात लेकर पधारे हैं। मार्गशीर्ष शुक्लपक्ष की पंचमी, गोरज समय राम और जानकी का ब्याह निश्चित हुआ। वेद और लोकरीति से पाणिग्रहण हुआ। ऊर्मिला लक्ष्मण के साथ, मांडवी भरतजी के साथ, श्रुतकीर्ति शत्रुघ्न के साथ - सभी का ब्याह एक मंडप में, एक साथ संपन्न हुआ। विधि संपन्न हुई। काफी समय बारात मिथिला में रुकी। रास्ते में निवास करती-करती बारात अयोध्या पहुंचती है। अवध में अत्यंत आनंद होता है। कई दिन बीतने पर महेमानों ने बिदा ली। आखिर में विश्वामित्रजी बिदा लेते हैं। साधु की बिदा अच्छे अच्छों को पीड़ा देती है। एक विरक्त साधु के सामने दशरथ अपने परिवार के साथ हाथ जोड़कर कहते हैं -

नाथ सकल संपदा तुम्हारी।

मैं सेवकु समेत सुत नारी।।

'यह सारी संपदा आपकी है। हम आपके सेवक मात्र है।' बाप, निष्काम साधु आपके आंगन आया हो और वह आपके सभी अच्छे कार्य संपन्न कराके अपनी साधना में लौट रहा हो तब उनसे क्या मांगना चाहिए इसकी सीख 'रामायण' से मिलती है। विश्वामित्र से दशरथजी ने मांगा कि, 'मुझ पर, मेरे परिवार पर हमें बच्चे समझकर कृपा करते रहियेगा। भजन से जब भी फुर्सत मिले तब बारबार अयोध्या आकर हमें दर्शन देते रहियेगा।' विश्वामित्र ने बिदा ली। महाराज अपने सिद्धाश्रम गए। राम के ब्याह के बाद अयोध्या की समृद्धि बढ़ी। 'बालकांड' यहीं पूरा होता है।

मातृशक्ति संस्कारधन का रक्षण करती है

बाप, 'मानस-अंबिका' में हम जनक की पुष्पवाटिका में आए हुए गौरीमंदिर और माँ अंबा की मूर्ति के समक्ष जानकीजी स्तुति करती है, उस स्तुति के पाठ की संवादी सुर में बातचीत कर रहे थे। उसके आखिरी चरण में हम है तब इस जगत में माँ की महिमा इतनी क्यों है? क्यों ऋषिमुनियों ने 'मातृ देवो भव' से उपनिषद का एक क्रम शुरू किया? मुझे 'महाभारत' का स्मरण होता है। कभी मैंने शायद बताया भी होगा। 'महाभारत' में एक वचन है कि मातृशक्ति आठ वस्तु की रक्षण करती है। वह बीस भुजावाली है, अष्ट भुजावाली है-जो भी कहे, मतलब कि हाथ की गिनती न करे। पर वे जगत को कफ़ी देना चाहती है। इसका यही अर्थ है। भगवान व्यास नारायण का मत है कि मातृशक्ति आठ प्रकार से हमारा रक्षण करती है। 'मातृ देवो भव' का यह भी एक कारण है।

पहला सूत्र है, 'धनं प्रजा: शरीरं लोकयात्रां धर्मं स्वर्गं ऋषिंपितृन्।' माँ आठ का रक्षण करती है। अब तो पूरे देश-काल की परिस्थिति अलग है। पर परिवार पर जब धनसंकट आए, उसे एक सामान्य स्तर पर ले तो भी घर में जो मातृशक्ति हो वह आखिरी घड़ी में अपना निजी धन सौंप देती है। ऋषिकाल में पुरुष अपनी आय स्त्री को सौंप दे फिर पुरुष को जब खर्च करना हो तब स्त्री से लेता है। पुरुष धन का जतन उतना नहीं कर सकता जितना लक्ष्मीस्वरूपा माँ कर सकती है। मातृशक्ति उचित व्यवस्था करना जानती है। सार यह कि नारी धन की रक्षक है। धन का मतलब रूपया-पैसा नहीं है। अपने परिवार में अपनी खानदानी, अपनी पवित्र प्रवाही परंपरा - यह अपना सबसे

बड़ा धन है। उसकी रक्षा भी मातृशरीर, मातृत्त्व ही करता है। पुरुष को इतना समय कहां है? व्रजभाषा में तो ऐसा कहा जाता है कि हमारा धन तो श्रीराधाजी है -

हमारो धन राधा राधा राधा ...

भगवान राम धन है। परमतत्त्व अपना धन है। किसी भी तरह से घर के अंदर माँ जतन करती है और मीरां ने तो उसे ही धन माना है -

पायोजी मैंने रामरतन धन पायो ...

तो, धन माने केवल रूपये, पैसे नहीं। अनेक प्रकार के संस्कार धन का रक्षण मातृशक्ति करती है। इसका हमें स्वीकार करना ही होगा। अपवाद हो पर अपवाद को सिद्धांत नहीं बना सकते। माँ एक अलग ही तत्त्व है।

दूसरा सूत्र है, 'प्रजा:।' प्रजा का रक्षण माँ करती है। प्रजा का लालन-पालन कौन करता है? हमारे नन्हें बच्चों को बड़ा माँ करती है। बच्चों को माँ से भी ज्यादा प्रिय दादीमा होती है। माँ अंबा का रक्षण करती है। मातृशक्ति गृहस्थ जीवन में प्रजातंतु का विस्तार करती है। मातृशक्ति के सहयोग से जगत चल रहा है। तो, माँ प्रजा का रक्षण करे। कभी-कभी ऐसा लगे कि विशिष्ट मातृशक्ति समग्र प्रजा का रक्षण करती है। झांसी की रानी का दृष्टांत है। ऐसी कितनी ही माताएं हैं जिसने समग्र राष्ट्र की रक्षा की है।

तीसरा सूत्र, 'शरीरं।' मातृशक्ति शरीर का रक्षण करती है। पूरे घर में कोई बीमार न हो इसीलिए बच्चों से लेकर वृद्धों तक सभी के शरीर का रक्षण माँ करती है। ऐसा नियम ही है साहब, कि बच्चा दवाई न पी सके उसकी दवाई तो माँ को ही पीनी पड़े, फिर माँ के दूध द्वारा उस औषध का सत्त्व-तत्त्व बच्चों के पेट में जाता है।

चौथा, 'लोकयात्रां।' जानकीजी राम के साथ न गई होती तो क्या राम की लोकयात्रा सम्पन्न हो सकती थी? राम की यात्रा राजयात्रा नहीं थी, लोकयात्रा थी। उसमें जानकीजी का संपूर्ण सहयोग था। पांडवों की वनयात्रा द्रौपदी के बगैर पूरी न होती। नलराजा की यात्रा दमयंती के बिना पूरी न हो पाती। हरिश्चंद्र काशी की लोकबाज़ार में बिक गए तब उनकी जो कुरबानी है वह तारा के बिना पूरी न हो पाती। सगालशा शेठ की लोकयात्रा तोरल के प्रताप से पूरी हुई। मातृशक्ति ही लोकयात्रा पूर्ण करती है। पैसा-सुविधा हो पर यात्रा करने की शक्ति ही हम में न हो तो? अपनी लोकयात्रा मातृशरीर के बिना अधूरी है। वेदयात्रा भी अधूरी है।

यहां अंबाजी में पाठशाला है इसका मुझे आनंद है। मैं तो सोचता रहता हूं कि प्रत्येक गांव में अमुक विद्यालय होने ही चाहिए। एक व्यायामशाला होनी चाहिए। युवाओं को दृढ बनाने के लिए यह ज़रूरी है। एक पाठशाला होनी चाहिए। एक पाठशाला संस्कृत की होनी ही चाहिए। संस्कृत भाषा माँ है, इसका जतन होना ही चाहिए। तीसरा, एक गौशाला होनी चाहिए। यह आवश्यक है। हम अपने बंगले में गाय न रख सके पर जहां गौशाला हो वहां गायों को दत्तक लेकर वर्ष भर का खर्च हम दे सके। ऐसा हिन्दुस्तान न बना सके कि एक भी गाय बाज़ार में भटकती रहे? यह होना चाहिए। इसे राष्ट्रीय कार्य के रूप में लेना चाहिए। चौथा, हर गांव में एक भोजनशाला होनी चाहिए। जहां जिसका कोई नहीं है उसे सन्मान के साथ भोजन मिले। मंदिर में छप्पनभोग हो और नीचे भूखे बच्चे रोते हो यह दृश्य देख करसनदास माणेक बापा ने लिखा -

ते दिन आंसुभीनां रे हरिनां लोचनियां में दीठां!
शंख घोरता, घंट गुंजता, झालरुं झणझणती :
शग शग कंचनआरती हरिवर संमुख नर्तन्ती.
जीर्ण, अजीठुं, पामर, फिक्कुं मानवप्रेतसमाणु.
कृपणक्लेवर कोड भर्युं यां मांड वडखेड काणुं.

एक भोजनशाला होनी चाहिए। हर छोटे-बड़े गांव में एक धर्मशाला होनी चाहिए। जहां आदमी निःशुल्क रह सके। रातभर रह सके। पहले अपने यहां ऐसा ही था।

तो, मेरे कहने का अर्थ यही है कि यह सब लोकयात्रा है। जो मातृशक्ति से संपन्न होती है। माता के प्रताप से लोकयात्रा होती है या इसी बहाने हमारी लोकयात्रा होती है। फिर है, 'धर्म।' धर्म का रक्षण माता करती है। पुनित महाराज की परंपरा में जो पुनित परंपरा आई उसमें रामभक्त जी ऐसा कहते थे कि हम स्त्री को धर्मपत्नी कहते हैं। पुरुष को ऐसा कुछ लागू नहीं पड़ता। क्योंकि धर्म का रक्षण माँ ही करती है। फिर 'स्वर्ग।' माँ स्वर्ग का रक्षण करती है। मुझे प्रश्न यह होता है कि स्वर्ग कौन-सा? अपना स्वर्ग माने पांच-सात प्राणियों का परिवार। यह स्वर्ग है। सत्संग स्वर्ग है। स्नेह, प्रेम भाव से जहां सब रहते हो वह स्वर्ग है। घररूपी स्वर्ग को माँ का रक्षण मिलता है।

'ऋषि।' अपने ऋषिमुनियों का रक्षण माता करती है। माँ ऋषि के सूत्र, बातें हमें सुनाती है। आज के अंग्रेजी माध्यम में पढ़ते हुए बच्चों को तो 'रामायण' कथा की जानकारी है ही नहीं! उसे माँ के पास बिठाइए अथवा तो कभी-कभी उसे आप कथा में लाईए। उसे जितना बैठना हो उतना बैठे। पर धीरे-धीरे आप उसे सत्संग में लाईए। जो सोसायटी नहीं करसकती वह सत्संग करेगा! ऐसा मेरा अनुभव है। माँ अपने ऋषिमुनियों की बातों का रक्षण करती है। व्यासपीठ भी मातृशक्ति है। कथा अपनी माँ है। और 'पितृन्।' 'महाभारत' का यह आठवां विचार है कि माता पितृओं का रक्षण करती है। माता की कृपा से अपने पितृ प्रसन्न रहते हैं। भक्ति माँ है। नारद ने लिखा, जिन के परिवार में भक्ति होगी उनके पितृ नृत्य करते होंगे।

तो, हम नौ दिनों से माता के गुणगान गाते हैं। ऋषियों ने 'मातृदेवो भव' का पहला ही पूजन क्यों किया? उसके अनेक कारणों में से एक कारण 'महाभारत' भी बताता है। ऐसी माँ की स्तुति जानकीजी कर रही है। 'रामचरित मानस' के 'बालकांड' अंतर्गत जनक की पुष्पवाटिका के गिरिजामंदिर में जानकीजी ने माँ भवानी की गाई स्तुति 'भई भवानी भवन' से शुरू कर और 'जानि गौरि अनुकूल' इतना भाग हमने संक्षेप में गाया। उसकी थोड़ी-सी चर्चा की। किसी भी माता के मंदिर में संस्कृत में गौरीस्तुति पाठ करेंगे तो अद्भुत रहेगा। पर संस्कृत में न हो सके तो भी लड़का या लड़की कोई भी यह स्तुति हृदयस्थ कर किसी भी माता के मंदिर में इस स्तुति का गायन करेगा। तो, उसकी प्रसन्नता बढ़ेगी। दुःख सहन करने की शक्ति मिलेगी। कोई भी मछली कांटा खाने नहीं जाती। वह कांटे के साथ लगाया आटा खाना चाहती है। अतः इस जगत में भी सभी दुःखरूपी कांटे के साथ-अस्तित्व का आटा लगाया है। पर इस स्तुति का आश्रय रहेगा तो दुःख सहन करने की शक्ति मिलेगी। जीवन में समता आयेगी। आप ऐसा कहे कि 'रामायण' की स्तुति हमें याद नहीं रहती तो -

जय आद्या शक्ति, माँ जय आद्या शक्ति ...

जो स्तुति याद हो वह गाने की। बस एक ही कि माँ की उपासना में बलि चढ़ाने की प्रथा से माँ प्रसन्न होती है यह बहुत बड़ी भ्रांति है। आज हम यज्ञ में तलवार से कुम्हड़ा काटते हैं यह काटने की प्रथा ही बंद कर दे न! काटने की मानसिकता ही हटानी है। ऐसी अंधश्रद्धा में से बाहर निकलिए। 'ओतार' का अर्थ है कभी माँ के दर्शन करते रोमांच हो। आंख में से आंसू निकले। भीतर एक भाव जगे फिर इसका अंधश्रद्धा में परिवर्तन हो गया। अंधश्रद्धा में से बाहर निकलिए। यह मेरी बिनती है। नौ दिनों तक यह स्तुति गाते रहे वह 'मानस-अंबिका', और विराम की बातें आखिर में करेंगे। थोड़ा कथाक्रम आगे बढ़ाए।

हमने कल 'बालकांड' पूरा किया। 'अयोध्याकांड' में कैकेयी माँ ने दशरथजी से वचन मांगे। उसी अनुसार राम-लक्ष्मण-जानकी को चौदह साल वन में जाना पड़ा। तमसा तट पर एक रात रूके। शृंगबेरपुर रूके, भरद्वाजजी के यहां रूके। प्रभु वाल्मीकि के आश्रम में रूके। उनके कहने से प्रभु चित्रकूट पधारे हैं। रामजी चित्रकूट में निवास करने लगे। दशरथजी को समाचार मिले कि अब राम नहीं आयेंगे। दशरथजी ने राम स्मरण करते-करते प्राणत्याग किया। महाराज दशरथजी का संस्कार हुआ। गुरुदेव वशिष्ठ जी ने भरत से कहा, 'भरत, पिता जिसे राज्य सौंपे वह वारिस कहलाए। पिता की आज्ञा मानना यह तेरा कर्तव्य है। राम, आज्ञा मानकर वन में गए तो आप आज्ञा मानकर चौदह साल राज्य संभालिए।' भरतजी ने कहा कि, 'मेरे रोग का औषध यह नहीं है। मैं सत्ता का नहीं, सत् का आदमी हूं। पहले हम सब चित्रकूट जायें। प्रथम सत्यदर्शन फिर प्रभु मुझे जो कहेंगे वह मैं करूंगा।' भाईयों का मातृप्रेम कैसा होता है यह 'रामायण' ने अद्भुत रीति से बताया है। समस्त अयोध्या चित्रकूट जाती है। सभा कई बार होती है। पर कोई हल नहीं निकलता। आखिर में भरतजी ने प्रभु पर छोड़ दिया। तुलसी ने चौपाई लिखी -

जेहि बिधि प्रभु प्रसन्न मन होई।
करुनासागर कीजिअ सोई।।

भरतजी ने कहा, 'आपका मन प्रसन्न रहे ऐसा निर्णय दीजिए। हम स्वीकार करेंगे।' प्रभु ने कहा, 'भरत, निर्णय थोड़ा कठोर है। मैं बन में रहकर पिता की आज्ञा का पालन करूं। तू घर रहकर प्रजा का पालन कर।' भरतजी ने स्वीकार किया। भरत के मन में यह है कि मैं चौदह साल तक बिना आधार कैसे जीऊंगा? अंतर्यामी राम समझ गए और स्वयं ही अपनी पादुका अर्पण की। 'मानस' का मत है कि भरत ने पद का स्वीकार न किया। ठाकोरजी की पादुका का स्वीकार किया। सत्ता का स्वीकार न कर सत् का स्वीकार किया। भरतजी ने अयोध्या के राजसिंहासन पर पादुका प्रस्थापित की। भरत पादुका से पूछ पूछ कर राज्य कार्य करते हैं।

'अरण्यकांड' में भगवान को ऐसा लगा कि चित्रकूट में रहे काफी दिन हो गए हैं। जान-पहचान भी बढ़ गई है। अतः प्रभु ने चित्रकूट छोड़ने का निर्णय लिया। वे अत्रि के आश्रम में आए। अत्रि में भगवान की स्तुति की। भगवान की यात्रा आगे बढ़ती है। प्रभु कुंभज ऋषि के आश्रम में पधारे। वहां से प्रभु गोदावरी तट स्थित पंचवटी में पधारे। रास्ते में जटायु से मैत्री हुई। शूर्पणखा दंडित हुई। उसने खर-दूषण को शिकायत की। वे लड़ने आए। भगवान ने चौदह हजार राक्षसों को मुक्ति दी। रावण आता है। प्रभु मारीच को मुक्ति देने उसके पीछे

दौड़ते हैं। दरम्यान मायावी रावण जानकी का अपहरण करता है। जटायु जानकी को छुड़ाने की कोशिश में शहीद होता है। रावण ने जानकी को लंका के अशोक वन में जतन से बंदी बनाकर रखी है।

इस ओर, राम मारीच को, परमधाम देकर लौटे। रघुनाथजी बिना जानकी के आश्रम को देख मानवीय लीला करते रो रहे हैं। सीताजी की खोज में विह्वल होकर निकल पड़े। जटायु मिले। प्रभु ने पितातुल्य मानकर जटायु का संस्कार किया। फिर आगे बढ़े। भगवान शबरी के आश्रम में पधारे। प्रभु ने शबरी से नौ प्रकार की भक्ति की चर्चा की। भगवान पंपासरोवर आए। वहां नारदजी मिले। फिर 'अरण्यकांड' पूरा हुआ।

'किष्किन्धाकांड' में भगवान जानकीजी की खोज में आगे बढ़े। हनुमानजी की कृपा से सुग्रीव-राम की मैत्री हुई। वालि निर्वाण पा गया। सुग्रीव को राज्य मिला। प्रभु प्रवर्षण पर्वत की गुहा में चातुर्मास करने रूके। जानकी शोध की योजना बनी। चारों दिशाओं में बंदर भालुओं को छोटे दलों में बांटे गए। जानकी की खोज के लिए दक्षिण दिशा में अंगद का दल गया। आखिर में हनुमानजी ने राम को प्रणाम किए और भगवान ने हनुमानजी को मुद्रिका दी। जामवंतजी ने हनुमानजी का आह्वान किया। हनुमानजी पर्वताकार हुए। वे लंकयात्रा के लिए निकलते हैं। 'किष्किन्धाकांड' पूरा हुआ।

तुलसी ने 'सुन्दरकांड' के आरंभ में लिखा है -

जामवंत के बचन सुहाए।
सुनि हनुमंत हृदय अति भाए।।
तब लगि मोहि परिखेहु तुम्ह भाई।
सहि दुख कंदमूल फल खाई।।

हनुमानजी महाराज अपने मित्रों से आशीर्वाद लेकर लंकयात्रा का आरंभ करते हैं। रास्ते में थोड़े विघ्न आए। भक्ति तक पहुंचने में विघ्न तो होते ही है। हनुमानजी रामकृपा से इन विघ्नों को पार कर लंका में प्रवेश किया। एक-एक मंदिर देखा, पर कहीं जानकी दिखाई नहीं दी। एक भवन देखा, जहां मंदिर अलग है। भवन अलग है। रामनाम अंकित है। तुलसी का क्यारा है। हनुमान को लगा कि लंका में यह वैष्णव का घर है। हनुमानजी और विभीषण की मुलाकात होती है। दो संत मिलते हैं। विभीषण ने युक्ति बताई। हनुमानजी अशोक वाटिका में गए हैं। माँ जब बहुत दुःखी लगी तब हनुमानजी ने रामनाम कहते-कहते मुद्रिका फेंकी है। माँ मुद्रिका देखकर चलित हो गई! हनुमानजी ने सारी कथा सुनाई। आशीर्वाद दिया, माँ प्रसन्न हुई।

रावण ने अपने पुत्र अक्षयकुमार को भेजा। हनुमानजी को बांधकर ले जाते हैं। तय हुआ कि बंदर की पूंछ जला दी जाए। आग लगाई। इसका अर्थ यह हुआ कि जो भक्ति के दर्शन करे उसे समाज जलाने की कोशिश करता है। परंतु हनुमानजी जैसी दृढ भक्ति होगी तो नहीं जलेगा। समाज की मान्यताओं को जला देगा। माँ ने चूड़मणि दिया है। हनुमानजी समुद्र फलांगकर राम के पास आए। सारी बातें बताई। भगवान ने सेना लेकर प्रस्थान किया। प्रभु ने समुद्र तट पर पड़ाव डाला। रावण ने कुपित होकर विभीषण को देशनिकाला दिया। विभीषण रामशरण में आया। भगवान तीन दिन बैठे। समुद्र प्रभु की शरण में आया। समुद्र ने सेतुबंध का प्रस्ताव रखा। प्रभु को जोड़ने का विचार पसंद आया। 'सुन्दरकांड' पूरा हुआ।

'लंकाकांड' के आरंभ में सेतुबंध की रचना हुई। प्रभु ने जोड़ने की प्रवृत्ति की। भगवान ने सेतुबंध बाद

रामेश्वर भगवान का स्थापन समुद्र तट पर किया। प्रभु ने जगत को एक वस्तु बताई कि हम सब एक है।

हरिहर ए स्वरूपअंतर नव धरशो,
भोळा भूधरने भजतां भवसागर तरशो,
ओम हर हर हर महादेव ...
- शिवानंद स्वामी

दूसरे दिन रावण को समझाने के लिए राजदूत के रूप में अंगद को भेजा, पर रावण माना नहीं। युद्ध का आरंभ हुआ। भयानक लड़ाई हुई। एक के बाद एक राक्षस निर्वाण पाने लगे। अंत में राम और रावण का युद्ध होता है और रावण को इकतीसवां बाण मारकर प्रभु ने रावण को वीरगति दी। रावण का तेज प्रभु के चेहरे में समा गया। रावण निर्वाणपद प्राप्त करता है। त्रिभुवन में जयजयकार हुआ। विभीषण को लंका का राज्य समर्पित हुआ। हनुमानजी अयोध्या गए। भरत को खबर पहुंचाने कि प्रभु आ रहे हैं। शृंगबेरपुर के भील प्रभु के पास आए। यही रामराज्य है। प्रभु छोटे से छोटे आदमी को भूले नहीं है। प्रभु ने केवट को हवाईजहाज में बिठाया। 'लंकाकांड' यहीं पूरा हुआ।

हनुमानजी अयोध्या पहुंचे। भरतजी प्राण छोड़ने की तैयारी में थे। समाचार मिले, परमानंद हुआ। प्रभु का हवाई जहाज सरयु तट पर ऊतरा। प्रभु अपने सखाओं के साथ ऊतरे। भरतजी दौड़े। दोनों भाईयों ने भेंट की। पता नहीं चलता है कि दोनों में से कौन वन में गया था। परमात्मा ने अमित रूप धारण करके ऐश्वर्यलीला की। सबको व्यक्तिगत साक्षात्कार करवाया।

सर्वप्रथम वशिष्ठ जी को भगवान ने कहा, सबसे पहले माँ कैकेयी से मिलना है। यही राम है। रामराज्य का मंत्र है। हमारा किसी ने चाहे उतना नुक्सान किया हो पर प्रतिशोध न लेना। न बोलते हो उसे बुलाना। संकीर्णता मत रखना। माँ कैकेयी की झिझक मिट गई है। सुमित्रा, कौशल्या मिले। सभी की आंखें छलकउठी है। वशिष्ठ जी ने पुरोहितों से पूछा, 'आज ही राजतिलक कर दें?' बोले, 'देरी करने गए तो बीच में ममता की एक रात्रि आ गई कि रामराज्य चौदह वर्ष विलंब में पड़ गया!' राम सत्ता के सिंहासन के पास नहीं गए। वशिष्ठ जी ने दिव्य सिंहासन मंगवाया। जहां सत् हो वहां सत्ता को आना ही पड़े। सिंहासन वहां रखा है। रामजी सबको प्रणाम कर गद्दी पर बिराजमान हुए। जानकीजी बिराजमान हुई। विश्व को रामराज्य का दान करते वशिष्ठ जी ने रामजी के भाल पर रामराज्य का तिलक किया और तुलसी ने लिखा -

प्रथम तिलक बसिष्ट मुनि कीन्हा।
पुनि सब बिप्रन्ह आयसु दीन्हा।।

त्रिभुवन में जयजयकार हुआ। छः महिने बीत गए। दिव्य रामराज्य का स्थापन हुआ। हनुमानजी के सिवा सभी बिदा हुए। पुण्यपुंज हनुमानजी रूक जाते हैं। समयमर्यादा पूरी हुई। जानकी ने पुत्रों को जन्म दिया। उसी तरह तीन भाईयों के यहां दो-दो संतान जन्मे। यों कहकर रामकथा को विराम दिया। उन्हें अयोध्या का वारिस बताकर दूसरी बार सीता का त्याग हुआ यह विवाद से भरी कथा तुलसीदास ने नहीं लिखी। तुलसी की इच्छा है समाज में संवाद स्थापित हो। फिर 'रामायण' में जो प्रसंग है वह कागभुशुंडि जी का चरित्र है। गरुड जी ने कथा सुनकर सात प्रश्न पूछे। कागभुशुंडि जी ने सातों प्रश्न के जवाब दिए।

आखिर कागभुशुंडि जी ने गरुड के पास रामकथा को विराम दिया। याज्ञवल्क्य महाराज भरद्वाजजी के पास कथा को विराम देते हैं। भगवान शिव ने पार्वती की आगे की कथा पूरी की। कलिपावनावतार तुलसीदासजी अपने मन को श्रोता बनाकर कथा कहते थे। उन्होंने अपने मन को संबोधित करते, कथा को विराम देते आखिरी शब्दों का उच्चारण किया-

जाकी कृपा लवलेस ते मतिमंद तुलसीदासहूँ।
पायो परम बिश्रामु राम समान प्रभु नाहीं कहूँ।।

इन चारों आचार्यों की आशीर्वाद की छाया लेकर मेरी व्यासपीठ आपके सामने अंबाजी धाम में नौ दिनों तक रामकथा गायन कर रही थी उस कथा को जब मैं विराम देने जा रहा हूं तब बाप, मुझे हंमेशा ऐसा लगता है कि सब कुछ कह डाला फिर भी लगे सब कुछ बाकी रह गया! ऐसी अनुभूति लेकर ही मैं व्यासपीठ पर से ऊतरता हूं, क्योंकि 'हरि अनंत हरि कथा अनंता।'

तो बाप, आपके सामने नौ दिनों कथा गाई। इसका मूल विचार 'मानस-अंबिका' हमने रखा। माँ अंबिका के धाम में, पावन नौ रात्रि के दिनों में हमारे ढंग से 'रामायण' का संवाद रचा। जब इसे विराम देता हूं तब समग्र आयोजन के लिए व्यासपीठ से मैं अपनी प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। आशीर्वाद तो मैं क्या दूं? पर व्यासपीठ पर बैठा हूं अतः व्यासपीठ के बल के कारण मैं हनुमानजी के चरण में और माँ अंबा के चरण में प्रार्थना करता हूं कि प्रवीणभाई और उनके समग्र परिवार में, भगवान की यह भक्ति और प्रसन्नता कायम बनी रहे। मेरे सभी भाई-बहनों, सब के लिए भी मैं हनुमानजी के चरण में प्रार्थना करता हूं कि खुश रहो।

खुश रहो हर खुशी है तुम्हारे लिए।
छोड़ दो आंसूओं को हमारे लिए।।

बाप, यह रामकथा किसे अर्पण करूं? इस सत्कर्म का बहुत बड़ा फल निर्मित होता है यह किसे अर्पण करूं? ये नौ दिनों की कथा 'मानस-अंबिका' हम सब एकत्र होकर माँ अंबा के चरण में धर दे, 'लीजिए मेरी माँ, तेरा तुझको अर्पण।'

हर गांव में एक व्यायामशाला होनी चाहिए। यौवन को दृढ करने यह जरूरी है। दूसरा, संस्कृत की एक पाठशाला होनी चाहिए। संस्कृत भाषा हमारी माँ है, वह बच जानी चाहिए। तीसरा, एक गौशाला होनी चाहिए। क्या हम ऐसा हिन्दुस्तान न बना सके कि एक भी गाय बाज़ार में भटकती हो? यह होना चाहिए। चौथा, हर गांव में एक भोजनशाला होनी चाहिए, जहां जिसका कोई नहीं उसे सन्मान के साथ भोजन मिले। हर छोटे-बड़े गांव में एक धर्मशाला होनी चाहिए, जहां आदमी निःशुल्क रह सके, रात्रि मुकाम कर सके।

मानस-मुशायरा

तेरी बरम में मैं आऊं भी कैसे?
तुझे मेरे पास बुलाऊं भी कैसे?
तू रूठे तो मनाऊं तुझे, लेकिन
वक्त रूठे तो मनाऊं भी कैसे?

•

मज़ाक जिन्दगी में हो तो कोई ओर बात है,
मज़ाक जिन्दगी से हो ये दिल को नापसंद है।

– मज़बूर साहब

अलग ही मज़ा है फ़कीरी का अपना,
न पाने की चिंता, न खोने का डर रहे।

– दीक्षित दनकौरी

चरागों के बदले मकां जल रहे हैं!
नया है जमाना, नयी रोशनी है।

– खुमार बाराबंकवी

तेरी खुशबू का पता करती है,
मुझ पे एहसान हवा करती है।

– परवीन शाकिर

शुभ लाभ

कवचिदन्यतोऽपि

राजा दानवीर, दमवीर, दयावीर, दंडवीर और दक्षवीर होना चाहिए

महाराजा कृष्णकुमारसिंहजी के जन्म शताब्दी समापन समारोह में मोरारिबापू का मननीय वक्तव्य

पुण्यश्लोक, प्रजावत्सल महाराजा कृष्णकुमारसिंहजी जन्म-शताब्दी के समापन के त्रिदिवसीय पर्व के प्रारंभ में मंच पर उपस्थित विचारयज्ञ के आचार्य गुणवंतभाई, इस भावेणा के राजवी आदरणीय श्री शिवभद्रसिंहजीबापू, राज परिवार, भावनगर के प्रथम नागरिक मेयर आदरणीय श्री महेन्द्रभाई, संतोषभाई और जिन्होने बहुत अच्छा और सच्चा सद्ग्रंथ प्रजा के सामने रखा ऐसे लेखक आदरणीय गंभीरसिंहजीबापू, आप सर्व भाईयों और बहनों।

मैंने महाराज के दर्शन बचपन में किए थे। जब वे महुवा आते थे तब हम छोटे थे; पर हमारी आंखो ने जो दृश्य देखा है कि जहां से वे गुज़रे वहां हर एक गांव

के बच्चों से लेकर बूढ़े तक लाईन में खड़े रहते थे। तब मैं अपनी माँ से कहता था सब देखने जा रहे हैं मैं भी जाता हूं पर ये कौन आ रहे हैं? तब गांव में कहा जाता था कि 'अठारह सौ रहावन के मालिक' आ रहे हैं। भावनगर को अठारह सौ रहावन का मालिक कहते थे। मैं तलगाजरडा को याद करके कहूं तो उस समय की दो घटनाएं ऐसी कि बापू, महाराज के नाम को मनौती मानी जाती थी। इस महापुरुष को लोग इतना मानते थे। जब पशु बीमार पड़ जाय तब महाराज के नाम की मनौती मानने के अलावा कुछ भी नहीं करते थे। भावनगर की दिशा में मानी मनौती से उनका काम हो जाय फिर एक दीया जलाते थे।

ऐसा एक महापुरुष! तब मुझे 'गीता' का गायक बहुत याद आए। उन्होंने कहा कि, 'नृपतिओं में राजा मैं राजा हूं।' ये जब विभूति के रूप में टांकते हैं तो यह तो विभूति था। मुझे दूसरे राजाओं का कोई अनुभव नहीं। 'महाभारत' में राजा के लक्षण मिले। कभी विदुर के मुख से धृतराष्ट्र को संबोधन होता हो। चाणक्य कोई दूसरी बात करे। मैं जो ग्रंथ 'रामचरित मानस' लेकर घूमता हूं उसमें से कुछ मिले। मैंने सरसरी तौर पर इन सबके पांच लक्षण निकाले हैं। लोकार्पित ग्रंथ के प्रथम पृष्ठ पर महाराजा का जो चित्र है उसे मैं तलगाजरडी दृष्टि से देखता हूं तो उसमें कहीं तमोगुण नहीं है। हा, राजा है अतः उनके वेश में कहीं रजोगुण हो सकता है। साहब, इनकी आंखे देखिए इसमें सत्त्वगुण भरा हुआ है। अतः इस राजवी में मुझे सत्त्वगुण ज्यादा दिखाई देता है। महाराज की दो आंखें, दो कान और एक नाक इन पांच लक्षणों के दर्शन होते हैं।

पांच प्रकार की वीरता राजा में होनी चाहिए। एक ये दानवीर है। राजा दानवीर होना चाहिए। तुलसीदासजी ने 'दोहावली रामायण' की रचना की है। उसमें राजा के लक्षण बताए हैं। यह सूर्यवंश अद्भुत है। राजा चाहे किसी भी वंश से हो वह मूलतः सूर्यवंशी ही होना चाहिए। सूर्यवंशी राजा वह होता है, सूर्य के ऊगने पर भी जिसका मुख्यद्वार नहीं खुलता है तो छोटे से छोटा नागरिक यह कहता है कि 'अभी भी हमारा राजा सोया हुआ है!' 'रामायण' में ऐसा लिखा है कि, कैकेयी के भवन में महाराज दशरथजी थोडे मोहपाश में बंधे और रामवनवास का सर्जन हुआ और वे सोते रहे! दरवाज़ा खुलता नहीं है तब तुलसी लिखते हैं -

द्वार भीर सेवक सचिव कहहिं उदित रबि देखि।
जागेउ अजहुँ न अवधपति कारनु कवनु बिसेषि।।

प्रजा प्रश्न पूछती है कि सूर्य ऊग चुका है और अभी तक हमारे अवधपति जगे नहीं है? मैंने कई बार कहा है कि एक समय ऐसा था कि प्रजा की खबर रहती थी कि उनका राजा कब सोया, कब जगा और क्या खाता है।

आइ सोनबाई के लिए प्रयुक्त शब्द इस राजवी के लिए प्रयुक्त करूं तो यह राजवी पूरबी दिशा का है। उसे सूर्यवंशी कहते हैं। प्रत्येक राजा को सूर्यवंशीत्व चरितार्थ करना चाहिए। प्रथम लक्षण दानवीर है। इनका त्याग कितना महान है। जब दान करने की वस्तु की सूचि बनती थी तब एक सूर ऐसा भी निकला कि पहरावनी में जो चीजें मिली है ये वस्तु तो अपने पास रख सकते हैं। दीवान साहब ने पूछा इस ऋषि ने जवाब दिया, 'हाथी दान में दे दिया फिर अंबारी की क्या ज़रूरत है?'

दूसरा, वह दमवीर होना चाहिए। दम माने ताकत। शक्तिशाली हो। राजाओं को शिकार का शौक होता था, परंतु शिकारी निशान न चूके तब एक आस बंधती थी। अब मृगया नहीं पर राजवी निशानेबाज चाहिए। यह राजवी निशानेबाज था; एक वस्तु पकड़ ले सकती है कि ये गरीब को ढूंढलेगा। प्रजा की बीमारी को भी ढूंढलेगा। क्योंकि इनमें टांकने की कला है। अतः बापू महाराजसाहब मेरी दृष्टि से दमवीर है। राजा दमवीर होना ही चाहिए।

तीसरा, यह महापुरुष दयावीर है। इनकी नम्रता, ऋजुता। बिडला भवन में गांधीजी के पैरों के पास नीचे बैठने की उनकी मानसिक सहजता! साहब, यह बहुत कठिन है। जब इरान का बादशाह सूफी संत से मिलने आए और संत की गैरमौजूदगी में उनका शिष्य पटसन का आसन बैठने के लिए दिया। राजा ने नज़र झुकाकर आदर दिया पर बैठे नहीं। फिर शिष्य ने मृगचर्म बिछाया पर राजा बैठा नहीं। फिर शिष्य ने एक शुभ्र धवल कपड़ा बिछाया पर वे बैठे नहीं। फिर दर्भ का आसन दिया फिर भी वे बैठे नहीं। संत देरी से आए तब तक राजा चले गए थे। शिष्य ने हकीकत बताई। साधु ने अर्थ निकाला, 'उन्हें बैठने योग्य आसन तूने नहीं दिया होगा।' ऐसा ही मानव जीवन का है। मन को बैठने योग्य जगह दे तो मन बैठ जाय। योग्य स्थान न मिलने से मन चंचल होता है। तो, गांधीबापू के पास यों बैठ जाना यह उनकी सहज नम्रता है।

चौथा लक्षण, दंड वीर होना चाहिए। दोषित को दंड मिलना चाहिए। तुलसी की रामराज्य कल्पना में दंड विधान नहीं है। 'दंड' शब्द है। पर कोई दंडित नहीं होता था, क्योंकि कोई गुनाह करता ही नहीं था। केवल संन्यासी के हाथ में जो दंड रहता था उसी के लिए 'दंड' शब्द प्रयुक्त होता था। दोषी को दंड मिलना ही चाहिए। इसमें समझदारी भी होनी चाहिए। राजा दंड वीर होना ही चाहिए।

पांचवा लक्षण, राजा दक्षवीर होना चाहिए। जिसमें दक्षता होती है, कौशल्य होता है, साहब। इस राजभवन में बिंदुजी महाराज की कथा होती थी। तो, दक्षवीर और बौद्धिकता। 'रामायण' में कहा गया है कि दक्ष वही है जिसे अपने लक्ष्य का होश हो।

ऐसा यह राजवी जिसमें ये पांच वीरता है। रावण बहुत बड़ा राजा फिर भी वह महान नहीं कहलाया, क्योंकि उसमें दक्षता कम थी। एक शे'र सुनाऊं -

खुशनुमा ही देखना, ना कद किसी का देखना,
बात पैड़ों की कभी आए तो साया देखना।

आपके सामने जब पेड़ों की बात आए तब उनकी ऊंचाई मत देखना उसकी छाँह देखना। इस राजवी की छाँह भी लम्बी-चौड़ी फैली हुई थी। राजा को छाँह का अर्थ कौन सीखाए? इसके लिए कोई सुमंत चाहिए। सद्भाग्य से राज्य के पास प्रभाशंकर पट्टणी थे। मैं हंमेशा दाढ़ि यों गिनाता हूं उसमें प्रभाशंकर दादा की दाढ़ी भी गिनाता हूं।

तो, जिस देश में राजा के पास रहा हुआ दीवान या प्रधानमंत्री यदि उदासीन हो जाय; जिस देश का शिक्षक या बैद उदासीन हो जाय यह देश का दुर्भाग्य है। यों प्रभाशंकर दादा भीतर से इच्छारहित थे। कैसी थी

उनकी कविता! दीवान कभी भी हो यह अच्छा लक्षण है। दीवान साहब की दाढ़ी उनके उज्ज्वल चरित्र की प्रतीक थी।

रावण का कदबड़ पर दक्षता की नहीं। बाप, भावनगर के अढारसौ रहावन; और साहब, उन्होंने ऐसा कहा कि, 'मैं खेती करूंगा'। महाराज खेती क्यों न करे? देपालदे को याद कीजिए। वर्षाऋतु आई। बीज बोने का समय। एक किसान कमज़ोर था। इससे बोने के समय घूंघरूं में एक ओर बैल और दूसरी ओर अपनी स्त्री को जोत दिया। वह किसान बोआई करने लगा था। इसी वक्त महाराजा देपालदे निकले और पूछने लगे, 'तुमने एक स्त्री को घूंघरूं में क्यों जोती है?' किसान राजा को पहचान नहीं सका। किसान ने कहा, 'मेरे पास बातें करने का समय नहीं है। इतनी ही दया आती हो तो तुम्हीं जुत जाओ।' और साहब, स्त्री के स्थान पर देपाल दे जुत जाते हैं। दो फेरे लगाए। जुआर की बोआई की। फिर किसान को दया आने पर उन्हें छोड़ दिया। ऐसा कहा जाता है कि खेत में मोती पके। किसी भी बार इतना फसल नहीं होती थी। किसान सोचता है यह तो राजा की कृपा है। उसे लगा कि मुझे यह अतिरिक्त फसल राज को अर्पित करनी चाहिए। किसान अनाज लेकर गया और देखा कि जिन्हें जोता था वही सामने बैठे है। वह घबरा गया। महाराज किसान को पहचान गए। अभयदान दिया। दयावीर थे। किसान जो कुछ बोला वह मानो कविता है, 'दो कुंडमें बोआई करवाई तो मोती पके ऐसा पहले पता होता तो पूरे खेत में बोआई करवाता।'

मेरे कहने का अर्थ है कि वे अशक्त के रक्षण का विचार करते हैं ऐसे राजवी की महिमा गाने के लिए हम एकत्र हुए हैं। उन्हें जाननेवाला दीवान साधुचरित! ऐसे राजवी की जन्मशताब्दी समापन अवसर पर समस्त आयोजकों को बहुत बहुत धन्यवाद। हम सब यहां महाराजा की मंगल आरती उतारने एकत्र हुए हैं। मैं आरती उतारते हुए प्रभु से प्रार्थना करता हूं कि, हे प्रभु, मेरा देश, मेरा समाज जाग्रत हो।

गांव का किसान पूछने लगा कि महाराज कहां मिलेंगे? राज्य का नियम कि किसान की चोरी हुई वस्तु की भरपाई राज करदे। किसान ने कहा तेरा बैल चोरी हो गया है। किसान को पता नहीं था कि अब आज़ादी आ चूकी है। अपने पुण्यश्लोक महाराजा मद्रास में गवर्नर है। किसान कहता है चाहे कहीं भी हो राजा तो हमारा ही है न। किसान मिलने के लिद मद्रास जाता है। उस वक्त पानी की तंगी है। मद्रासी महिलाएं पानी भरने निकले। उसी वक्त गवर्नर साहब की बग्धी निकलती है। वे पूछते हैं, 'ये बेटियों पानी के लिए क्यों दौड़ती है?' जवाब मिला, 'पानी की तंगी है।' वे कहने लगे, राजभवन में बहुत पानी है। दरवाजे खोल दीजिए। पानी की समस्या हल हो गई। किसान आकर कथनी सुनाता है। महाराजा की आंखे नम होती है। सेक्रेटरी से कहा, 'इसे बैल की कीमत और ट्रेन का टिकट दीजिए।'

मैं इस शताब्दी के पावन यज्ञ में एक छोटी-सी आहुति देने के लिए आ सका इसी बहाने बचपन में चड्डी पहनकर महाराजा के दर्शन किए थे। आज अंजली देने का अवसर मिला।

'प्रजावत्सल राजवी' के विमोचन समारोह में भावनगर में प्रस्तुत वक्तव्य: दिनांक १७-५-२०१२